सिद्धयोग

योगयोगेश्वर अनन्तश्री
चन्द्रमोहनजी महाराज

योग सिद्धान्तों
एवं
शिक्षाओं का
प्रतिपादक मासिक

वर्ष:36
मार्च 2004
11-12

श्री सिद्धगुफा प्रकाशन
सँवाई-283 202 (आगरा) उ.प्र.

SIDDHYOG
HINDI MONTHLY

संस्थापक :
योग-योगेश्वर अनन्तश्री
चन्द्रमोहनजी महाराज

संपादक :
आचार्य (डॉ.) दासलाल ब्रह्मचारी

संयुक्त संपादक :
डॉ. विजय सिंह

प्रबन्ध संपादक
समस्त योग प्रचार
मण्डलों के अध्यक्ष
एवं
गुरु भाई-बहिन

एक प्रति	रु.	09.00
वार्षिक शुल्क	रु.	90.00
द्विवार्षिक	रु.	170.00
आजीवन	रु.	800.00

इस अंक में...

- अमृत कण 2
- हेय एवं हेयहेतु क्या ?
  (विशेष लेख) 3
- सम्पादकीय 6
- एक्यूप्रेशर : एक प्रभावी चिकित्सा पद्धति
  कैलाशचन्द अग्रवाल 8
- श्री प्रभुपद
  दिनेश शर्मा 11
- अकाल मृत्यु से रक्षा
  केशवदेव उपाध्याय 12
- आश्रम समाचार
  कृष्णकान्त झा 18
- आहार-शुद्धि
  स्वामी कृष्णबोधाश्रम जी 21
- शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्
  डा० शरण प्रसाद 23
- सुस्वागतम् नव संवत्सर
  द्वारिका प्रसाद शर्मा 31
- श्री रामचरित मानस एवं योग
  पूर्णचन्द्र पन्त शास्त्री 32
- महाप्रभु श्री रामलाल योग शिविर गंगापुर सिटी
  हरीमोहन पैगोरिया 37
- स्वास्थ्य चर्चा 38
- आय-व्यय का विवरण—वर्ष-36 40

सिद्धयोग

योग सिद्धान्तों का प्रतिपादक मासिक-पत्र

श्री सिद्धगुफा योग प्रशिक्षण केन्द्र, संवाई (एत्मादपुर) आगरा

वर्ष 36 अंक 11-12	ध्यायं ध्यायं यदिह परमं ब्रह्म शुद्ध स्वभावम्, मर्त्योमृत्योर्मुख विवरतो, मुक्तिमाप्नोति सद्यः। तत्प्राप्त्यर्थान् बहुतर विशदान् योगशास्त्रोपदेशान्, कल्यानां भवतु महतां सिद्धये सिद्धयोगः।।	फ़रवरी-मार्च 2004

गजाननं भूतगणादिसेवितं,
कपित्थजम्बूफलचारुभक्षणं ।
उमासुतं शोकविनाशकारकं,
नमामि विघ्नेश्वरपादपंकजं।।

गज के समान मुख वाले, भूतगणों से सेवित, कपित्थ, जम्बू जिसका प्रिय भोजन है, पार्वती पुत्र, शोक विनाशक गणेशजी को मेरा नमन।

अमृतकण

ऊर्ध्वबाहुर्विरौम्येष न च कश्चिच्छृणोति मे।
धर्मादर्थश्च कामश्च स किमर्थं न सेव्यते।।

—महाभारत

मैं दोनों भुजाएँ ऊपर उठाकर पुकार–पुकार कर कह रहा हूँ, परन्तु मेरी बात कोई सुनता नहीं। धर्म से मोक्ष तो मिलता ही है, अर्थ (धन–सम्पदा) और काम भी सिद्ध होते हैं, फिर भी लोग धर्म का पालन क्यों नहीं करते ?

x x x x x

आहार निद्राभय मैथुनं च सामान्यमेतत्पशुभिर्नराणाम्।
धर्मो हि तेषामधिको विशेषा धर्मेणहीनाः पशुभि समानाः।।

—हितोपदेश

भोजन, निद्रा, भय, मैथुन–ये चारों मनुष्य व पशु में समान रूप से पाये जाते हैं, परन्तु मनुष्य में एक विशेष गुण 'धर्म' पाया जाता है, जिससे हीन मनुष्य पशु के समान ही है।

x x x x x

समं पश्यन्हि सर्वत्र समवस्थित्मीश्वरम्।
न हिनस्तयात्मनात्मानं ततो याति परां गतिम्।।

—श्रीमद् भगवद्गीता

जो व्यक्ति परमात्मा को सर्वत्र और प्रत्येक जीव में समान रूप से मौजूद देखता है, वह अपने मन के द्वारा अपने आप को भ्रष्ट नहीं करता। इस प्रकार वह दिव्य गन्तव्य को प्राप्त कर लेता है।

x x x x x

शांति तुल्यं तपोनास्ति न संतोषात्परं सुखम्।
न तृष्णायाः परोव्याधिर्न च धर्मो दया परः।।

—चाणक्य नीति

शांति से बढ़कर कोई तप नहीं, संतोष से श्रेष्ठ सुख नहीं है, तृष्णा से बढ़कर रोग नहीं है और दया से बढ़कर धर्म नहीं है।

x x x x x

हेय एवं हेयहेतु क्या ?

योगयोगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहन जी महाराज)

मेरे आत्म तेजांश बच्चों,

मैं आज अपने व्याख्यान में तुम्हें यह बतलाना चाहता हूँ कि दुःख क्या है और इसे कैसे दूर किया जा सकता है ? देखो ! जिस समय कोई व्यक्ति दुःख द्वन्द्व से घिर जाता है तो उसके मुख से स्वतः ही निकलता है—हे भगवान् ! मेरा इस दुःख से पीछा छुड़ा दो। किन्तु मनुष्य को यथार्थ में इस बात का ज्ञान नहीं होता है कि दुःख क्या चीज है ? इसकी उत्पत्ति कहाँ से होती है और कैसे इसे हटाया जाये। दुःख के आधार के रूप में पतञ्जलि भगवान् ने पाँच क्लेशों का वर्णन किया है। ये पाँच क्लेश क्रमशः योग दर्शन में अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश कहे गये हैं। इन क्लेशों में सर्वप्रथम अविद्या नाम का क्लेश है। **'तस्य हेतुरविद्या'** क्लेशों का कारण अविद्या है। यही समस्त क्लेशों की जननी व आधारभूमि है। अविद्या का लक्षण भगवान् पतञ्जलि देव ने इस प्रकार किया है। **'अनित्याशुचि दुःखानात्मसु नित्यशुचिसुखात्मख्यातिरविद्या'** अर्थात् अनित्य को नित्य समझना, अपवित्र को पवित्र समझना दुःख को सुख समझना, तथा अनात्म वस्तु को आत्मा समझ लेना— ये चारों अविद्या के अन्तर्गत हैं। हमारे शरीर अनित्य हैं। पृथ्वी, चन्द्रमा, सूर्य अनित्य हैं किन्तु हम इन्हें नित्य समझ बैठते हैं यह पहली प्रकार की अविद्या है। मनुष्य का शरीर सदा अशुद्ध रहता है। हमेशा मलमूत्र से भरा रहता है। इसमें रक्त, त्वचा माँस अस्थि आदि भरे हुये हैं किन्तु अज्ञानता के कारण मनुष्य शरीरों में आसक्ति रखता है। इसी शरीर से प्राणों के निकल जाने के बाद कोई छूना भी अच्छा नहीं समझता। यह अस्पृश्य हो जाता है, मृत्यु के बाद कोई इसे घर में रखना नहीं चाहता। ऐसे नश्वर शरीर को अविद्या के कारण हम पवित्र व शुद्ध मानते हैं किन्तु वस्तुतः यह शरीर अपवित्र है। मनुष्य दुःख को सहन करते–करते सुख मान लेता है। जन्म, मृत्यु, जरा–व्याधि के महादुःख इसे लगे हुये हैं। परिणाम, ताप तथा संस्कार के दुःख–दुःख देते रहते हैं इसके अतिरिक्त गुण वृत्ति विरोध का दुःख भी बड़ा दुःख है। हर व्यक्ति अपने–अपने गुण एवं स्वभाव के अनुसार वर्तता है। इस कारण से लोगों के परस्पर विचार नहीं मिलते। पति–पत्नि का, पिता–पुत्र का, भाई–भाई का, गुरु–शिष्य का जहाँ मन नहीं मिलता है वहाँ विरोध रहता है। जैसे संसार में हर व्यक्ति की शक्ल एक दूसरे से नहीं मिलती है ऐसे ही गुणवृत्ति के न मिलने से विरोध रहता है जो दुःख का कारण बन जाता है। इसलिये विवेकशील व्यक्ति संसार को 'सर्वमेव दुःखम् विवेकिनः' के अनुसार दुःखरूप देखता है।

दूसरा क्लेश अस्मिता नाम का क्लेश है। **'दृग्दर्शन शक्त्योरेकात्मतेव अस्मिता'** दृग् शक्ति पुरुष और दर्शन शक्ति बुद्धि (दृश्यतेऽनयेति दर्शनम्) इन दोनों की एकात्मता का भासित होना दूसरा क्लेश है। इसी को जड़ चेतन की गांठ भी कहते हैं। चित्त में रहने वाला यह दूसरा **'अस्मिता'** नाम का क्लेश है। तीसरा क्लेश 'राग' है। **'सुखानुशयीरागः'** कहकर पतंजलि जी ने इसकी परिभाषा की है। सुख का अनुभव कर लेने के बाद उसकी चाह बनी रहे इसी का नाम राग है। चौथा क्लेश द्वेष है। **'दुःखानुशयी द्वेषः'** दुःखानुभूति होने के बाद उसके प्रति घृणा, क्रोध और वैर का भाव मन में बना रहे उसे द्वेष नाम का क्लेश कहा जाता है। यह राग और द्वेष भी चित्त में रहने वाले कठोर क्लेश हैं। पाँचवाँ क्लेश है मौत का भय। इसे अभिनिवेश कहते हैं। **'स्वरसवाही विदुषोऽपि तथारूढो ऽभिनिवेशः'** अर्थात् विद्वान एवं मूर्ख में समान रूप से संस्कारगत जो मृत्यु का भय है उसी का नाम अभिनिवेश है। मृत्यु का भय ब्रह्मा से लेकर एक क्षुद्र कीट तक समान रूप से विद्यमान रहता है।

इन क्लेशों से छुटकारा पाना ही योग का लक्ष्य है। इन क्लेशों को हटाने का उपाय है ध्यान योग। ध्यान योग अथवा क्रियायोग के द्वारा सूक्ष्म तथा विवेकख्याति से दग्धबीज होने पर क्लेश नष्ट हो जाते हैं। अविद्या आदि क्लेशों का जो हेतु है—कारण है उसे हेयहेतु कहते हैं। महर्षि पतंजलि देव ने एक सूत्र के द्वारा हेयहेतु बतलाया है। जिसके अनुसार **'द्रष्टृदृश्ययोः संयोगः हेयहेतुः'** के सिद्धान्त को समझाया है।

द्रष्टा चेतन पुरुष है जो चित्त का स्वामी होकर उसकी वृत्तियों को देखने वाला है। चित्त दृश्य है। यह समस्त संसार को दिखाता है। गुणों का परिणाम, शरीर, इन्द्रियाँ तथा इसके विषय सब दृश्य वर्ग में आते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि चित्त और पुरुष का भोक्ता-भोग्य सम्बन्ध है यह सम्बन्ध या संयोग ही दुःख का हेतु या कारण है। जब तक द्रष्टा दृश्य का संयोग नहीं हटता है तब तक इस संयोग का क्लेश रहेगा ही। असम्प्रज्ञात समाधि का लक्ष्य है इस संयोग को हटा देना। इसी की निवृत्ति के लिये योगीजन हिमालय में साधनारत है। असम्प्रज्ञात के दृढ़तर अभ्यास से ही योगी कैवल्य मुक्ति या केवली भाव को प्राप्त हो सकता है। अस्तु।

मैं अपने व्याख्यानों में तुम्हें बार-बार इस बात को समझाता रहता हूँ कि साधक को क्रियाशील बने रहना चाहिये। जो मनुष्य साधनारत रहता है उसके मार्ग में विघ्न बाधायें नहीं आती हैं। यदि आती भी हैं तो हट जाया करती हैं। मैं तुम्हें स्वाध्याय (मंत्र जाप) तथा ध्यानाभ्यास की आज्ञा देता रहता हूँ। दो घण्टे मंत्र जाप एवं एक घण्टा ध्यान में बैठने की आज्ञा तुम सबको देता हूँ। स्वाध्याय किसे कहते हैं यह मैं तुम लोगों को समझाता हूँ। **प्रणवादि पवित्राणाम् जपः स्वाध्यायः** अर्थात् ओंकार आदि पवित्र भगवन्नाम का जाप स्वाध्याय कहलाता है। गुरु मंत्र का जाप इसी में आता है। **मोक्षा शास्त्राणाम् अध्ययनम् वा स्वाध्यायः** मोक्ष दायक शास्त्रों का पठन मनन भी स्वाध्याय है। जो शास्त्रोक्त विधि से स्वाध्याय का अवलम्ब लेते हैं, उन्हें बहुत जल्दी समाधि लाभ हो जाता है। मंत्र जाप के कई भेद मैंने तुम्हें बताये हैं। एक तो

बोल–बोल कर जप होता है। किन्तु जोर–जोर से बोलकर मंत्र जाप करना अच्छा नहीं है। क्योंकि उच्चारण करने से मन्त्र की शक्ति क्षीण होती है। जप का दूसरा प्रकार है उपांशु जाप। इसमें होठ फड़कते मालूम पड़ते हैं। किन्तु दूसरे को आवाज सुनाई नहीं देती है। इसी प्रकार किसी मन्त्र का निरन्तर जाप करने के बाद मंत्र मन में प्रवेश कर जाता है। स्वाध्यायाभ्यसन की तीव्र साधना के द्वारा स्फुट प्रज्ञालोक होने लगता है और योगी सम्प्रज्ञात समाधि की ओर अनायास प्रवेश पा जाता है। मंत्र मनोगत होने के बाद धीरे–धीरे बुद्धि में प्रवेश कर जाता है और साधक ऋतम्भरा प्रज्ञा की स्थिति को पा जाया करता है। स्वाध्याय और ध्यानयोग से ही परमात्मा का प्रकाशन होता है। ध्यानयोग के निरन्तर अभ्यास से चित्त में सतोगुण का पूर्ण विकास हो जायेगा यदि बीच में शरीर छूट भी जाये तो भी मुक्ति पर्यन्त नरदेह मिलती रहेगी और अन्त में कल्याण भाजन बन ही जाओगे। इसलिये मेरी बातों को सुनकर अपने आप को योग मार्ग में लगाओ यही कल्याण का मूल साधन है। ऐसा करोगे तो श्री प्रभुजी की कृपा होगी सबका भला होगा।

बार–बार आशीर्वाद !

* * *

सिद्धयोग मासिक (पत्रिका) का विवरण

फार्म नं० ४

१.	प्रकाशन का स्थान	— श्री सिद्धगुफा, सवाई, आगरा (उ०प्र०)
२.	प्रकाशन का अवधिक्रम	— मासिक
३.	मुद्रक का नाम	— विनय गजानन शर्मा
	राष्ट्रीयता	— भारतीय
	पता	— कर्मयोग प्रिंटिंग प्रेस, बसई कलां, ताजगंज, आगरा।
४.	प्रकाशक का नाम,	— विजय गजानन शर्मा कृते सिद्धगुफा प्रकाशन, सवाई आगरा।
	राष्ट्रीयता	— भारतीय
	पता	— श्री सिद्धगुफा योग प्रशिक्षण केन्द्र सवाई (आगरा)
५.	संपादक का नाम	— आचार्य ब्र. दासलाल शर्मा
	राष्ट्रीयता	— भारतीय
	पता	— श्री सिद्धगुफा योग प्रशिक्षण केन्द्र सवाई (आगरा)
६.	स्वत्वाधिकारी	— ब्रह्मलीन अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज।

मैं विजय गजानन शर्मा यह घोषित करता हूँ कि उपर्युक्त विवरण मेरी अधिकतम जानकारी और विश्वास के अनुसार सही है।

दिनांक–२६ फरवरी २००४

कृते, सिद्धगुफा प्रकाशन
विजय गजानन शर्मा

● सम्पादकीय

हमारा यह वर्ष

आचार्य (डा०) दासलाल ब्रह्मचारी

मार्च के अंक के साथ ही सिद्धयोग का यह वर्ष समाप्त हो जायेगा। अप्रैल २००४ से श्री आनन्दकन्द प्रभु जी के पावन जयन्ती पर्व श्री रामनवमी से हमारा वर्ष प्रारम्भ होगा। सिद्धयोग कल्याण धन गुरुदेव की पावन वाङ्मय स्मृति है। आज से ३६ वर्ष पूर्व इस अक्षयवट का गुरुदेव ने आरोपण किया था। सिद्धयोग में योग सिद्धान्तों का ही प्रतिपादन किया जाता है। योग क्या है ? इसका लक्ष्य क्या है ? इसकी विधि क्या है, आदि–आदि सभी प्रश्नों का उत्तर इसमें पाया जाता है। स्वाध्याय परमात्म–प्राप्ति के प्रमुख उपायों में से एक है। उपनिषदों में आता है कि यह आत्मा बलहीन व्यक्ति से प्राप्त नहीं किया जा सकता। प्रमाद रहित होकर अति उत्कट अभिलाषा के साथ जो स्वाध्याय करता हुआ परमात्मा की उपासना करता है वह परमात्मा के स्वरूप को पा जाता है।

सिद्धयोग योग साधकों के लिये स्वाध्याय सामग्री के रूप में है। इसके पठन, मनन से साधक के चित्त का शोधन होता है। धार्मिक समाज में पत्र–पत्रिकाओं की कमी नहीं है। किन्तु जिस प्रकार की आत्मोत्थान उपयोगी सामग्री इसमें है अन्यत्र नहीं है। योग साधक को योग सिद्धान्तों का विज्ञ होना चाहिये। गीता में भगवान् ने कहा है–"**अज्ञश्च अश्रद्धानश्च संशयात्मा विनश्यति**" अर्थात् जो अज्ञ है तथा साथ में अश्रद्धालु भी है वह परमार्थ मार्ग से च्युत हो जाता है। जो श्रद्धालु है वह अवश्य आगे बढ़ता है। श्रद्धा योग साधना की नींव है। गुरुदेव के प्रति, योग साधना के प्रति यदि श्रद्धा नहीं है तो लक्ष्य की प्राप्ति कठिन है। योग का ज्ञान दिव्य ज्ञान है। यह अन्तःकरण में प्रत्यक्ष अनुभव करने का विषय है। स्वाध्याय के विषय में व्याख्या करते हुये भगवान् व्यास देव कहते हैं कि मुक्तिदायक शास्त्रों का अध्ययन स्वाध्याय है। तथा मन्त्र का जाप करना स्वाध्याय है। स्वाध्याय का फल है इष्टदेव के दर्शन। स्वाध्यायशील व्यक्ति के सन्मुख देवता, सिद्ध, ऋषि–मुनि आ जाते हैं और साधक की अभीष्ट इच्छा को पूर्ण कर दिया करते हैं। सिद्धयोग योग साधकों को आत्मोत्थान की ओर ले जाने के लिये निरन्तर अग्रसर है। इसके अध्ययन से साधक के मन में आने वाली भ्रान्तियाँ दूर हो जाती हैं और साधक को सही मार्ग मिल जाता है। साधक के अनुभूतियों की पुष्टि इस पत्रिका के अध्ययन से हो जाया करती है। पूज्यपाद गुरुदेव ने बहुत ऊँचा लक्ष्य सामने रखकर इस की संस्थापना की थी। इसके माध्यम से वे योग के अमर सन्देश को जन–जन तक पहुँचाने के लिये कटिबद्ध रहे। इससे

वस्तुतः ही योग एवं अध्यात्म समाज उपकृत हुआ है। इतर धार्मिक पत्र–पत्रिकाओं को देखें तो व्यक्तिवादी विज्ञापन एवं आत्मश्लाघा की बातें ज्यादा तथा सिद्धान्त की बातें कम ही मिलती है। अस्तु। 'सिद्धयोग' के पूर्व सम्पादक गुरूदेव के ही प्रिय शिष्य देवी प्रसाद शर्मा "दिव्य" रहे थे। वे स्वयं में एक बहुत अच्छे लेखक, कवि तथा विचारक रहे हैं। इस पत्रिका के कुशल संचालन में उनके अथक प्रयत्न और कर्तव्य निष्ठा को भुलाया नहीं जा सकता। उन्होंने अपने जीवन के सत्ताइस वर्ष इस के विकास के लिये समर्पित किये थे। गुरूदेव के लीलावसान के बाद थोड़ा अवरोध आ गया किन्तु दिव्य जी के कुशल नेतृत्व ने इसे निरन्तर गतिमान रखा। **'श्रेयांसि बहुविघ्नानि'** कल्याण के मार्ग में बहुत से विघ्न आ जाया करते हैं। किन्तु विघ्न विनाशक–भवभय विनाशक गुरूदेव की कृपा से सब विघ्न स्वतः दूर हो जाया करते हैं। गुरूदेव ही सब कार्यों के करण–कारण हैं। उनकी कृपा ही सर्वोपरि है।

इस अवसर पर अपने विद्वान गुरू भाई बहिनों व अन्य लेखकों के प्रति अपना आभार प्रकट करना आवश्यक समझता हूँ उनके वैदुष्य पूर्ण लेखों से ही इस की शोभा बनी हुई है। उनका यह सहयोग वस्तुतः श्लाघनीय है। उन उदारचेता गुरूभाई बहिनों के अर्थव्यवस्था में सहयोग को भी भुलाया नहीं जा सकता जिनके सहयोग से भारी घाटे की पूर्ति होती है। कागज एवं मुद्रण की अत्यधिक मँहगाई के कारण इसका वार्षिक शुल्क भी बढ़ाना पड़ गया है। प्रिय पाठकों व ग्राहकों को इसे वहन करना पड़ रहा है इसका हमें खेद है। सभी गुरू भाई बहिनों को चाहिये कि वे इसके नियमित ग्राहक बनें तथा अन्य लोगों को भी बनावें ताकि हमारे ग्राहकों की संख्या बढ़े और हमें कम से कम घाटा हो।

चैत्रमास के शुभारम्भ के साथ ही नया वर्ष प्रारम्भ हो जाता है। इसी माह के शुक्ला सप्तमी, अष्टमी तथा नवमी को परम गुरूदेव आनन्दकन्द श्री प्रभु जी का पावन जन्मोत्सव अत्यन्त हर्ष उल्लास के साथ उनकी तपोभूमि तथा लीलाभूमि श्री सिद्धगुफा सवांई में धूमधाम से मनाया जा रहा है सभी गुरूभक्तों को इसमें सम्मिलित होकर गुरूदेव का आशीर्वाद तथा कृपा प्राप्त करनी चाहिये। यहाँ आकर नई शक्ति, प्रेरणा तेज उत्साह का वर्द्धन होता है। पूज्यपाद गुरूदेव जी अपने श्री मुखसे कहा करते थे कि जहाँ एक सिद्धयोगीराज वास कर लेते हैं वहाँ ५००० वर्ष तक उनके तेजस परमाणु विद्यमान रहा करते हैं। इसलिये इस लीला भूमि में उनके दिव्य परमाणु हैं इस रजकण में अलौकिक शक्ति विद्यमान है। परम प्रभु रामलाल जी महाराज के पावन चरणों में इस मंगल अवसर पर कोटि–कोटि नमन है।

* * *

एक्यूप्रेशर : एक प्रभावी चिकित्सा पद्धति

(कैलाश चन्द अग्रवाल, खिरनी-राजस्थान)

आज इस मँहगाई के युग में आम आदमी जो गरीबी के स्तर पर जी रहा है एलोपथिक चिकित्सा करवाने में सक्षम नहीं है। मँहगी एलोपेथिक चिकित्सा होने के कारण आम जनता इसका लाभ नहीं ले सकती। प्राचीन भारतीय चिकित्सा पद्धति में एक्यूप्रेशर के बिना दवाई के रोग को समूल नष्ट करने की अपार शक्ति है। इसी संदर्भ में माइग्रेन, तीव सिरदर्द, भयंकर बीमारी को जड से नष्ट करने के लिए एक्यूप्रेशर चिकित्सा पद्धति के बारे में लिखा जा रहा है। लाभ उठावे—

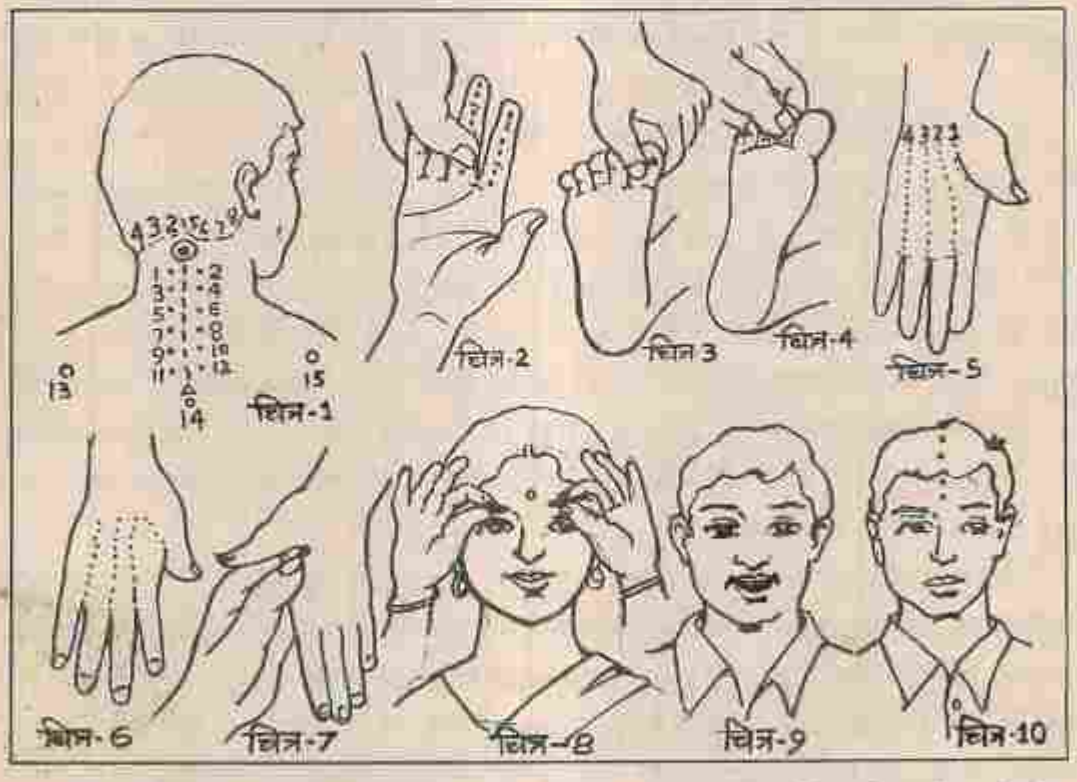

तीव्र सिर दर्द—माइग्रेन, एक्यूप्रेशर द्वारा उपचार। आजकल करोड़ों व्यक्ति हैं। जो तीव्र सिर दर्द—माइग्रेन रोगों से पीड़ित है।

तीव्र सिरदर्द माइग्रेन के कारण—तीव्र सिर दर्द के कई कारण है। जिगर, पित्ताशय की खराबी, पेट गैस, कब्ज, गर्दन के भाग, रीढ़ की हड्डी में कोई विकार, हाई ब्लड प्रेशर, पुराना कब्ज, जुकाम, नजला, कान या दाँत दर्द, नसों में खिचाव, सिर में चोट लगना, ट्यूमर होने, तिल्ली का बढ़ना, मानसिक अशान्ति, ऋतु के बदलने पर, अधिक गर्मी, अधिक हवा लगने,

ठन्डक से अचानक गर्म कमरे में आने, दिमागी काम अधिक करने, आँखों पर ज्यादा जोर पड़ना सोच विचार ज्यादा चिन्ता में पड़ना, प्रातः भ्रमण योग, व्यायाम न करना, रात दिन प्रतिदिन यात्रा करना अधिक परिश्रम व्यायाम करना, स्त्रियों को यह रोग अधिक देखा गया है, हारमोन्स की असमानता या प्रजनन अंगों में किसी में विकार, मिरगी, हिस्टिरिया, पेशाब के किसी रोग के कारण, मासिक धर्म के कुछ दिन पहले या रजोनिवृत्ति की अवस्था में सिर दर्द शुरू होता है।

कुछ लोगों को विशेष वस्तुएँ खाने पीने से सिर दर्द हो जाता है। शराब, बोतल बन्द ठण्डे पेय, कॉफी, पनीर, चॉकलेट, सोयाबीन, खोया (मावा), केला, आलूबुखारा, माँस, कई दवाइयों या कुछ स्त्रियों को गोली गर्भ निरोधक खाने, अधिक स्त्री प्रसंग करने, शारीरिक शक्ति से अधिक काम–काज करने से तीव्र सिर दर्द हो जाता है।

एक्यूप्रेशर द्वारा उपचार

सबसे पहले गर्दन के पीछे गड्ढे में चित्र नं० एक पर अंगूठे को आड़ा करके बाँये से दाँये क्लोक की तरह घुमायें यह क्रिया गिनती करके दो सौ बार करें। नं० १ से ७ तक गड्ढे से हटकर बराबर अंगूठे से १०० बार प्रेशर दें। तथा गड्ढे के दोनों तरफ चित्रानुसार नीचे गर्दन तक दोनों अंगूठे से १०० बार धीरे–धीरे प्रेस करें। सिर दर्द एकदम बन्द हो जायगा, चित्र नं० ३ में व चित्र नं० २ में क्रमशः हाथों व पैरों के अंगूठे सहित सारी अंगुलियों में प्रेशर दें, ये भाग सिर तथा मस्तिष्क से सम्बन्धित है। तीव्र सिर दर्द, माईग्रेन, आँखों का तनाव एक दम कम हो जाता है।

चित्र नं० ५ व ६ में हाथों व पाँवों के ऊपर वेनल पर मालिश की भाँति करना चाहिये इससे तीव्र सिर दर्द माईग्रेन दूर हो जाता है। चित्र नं० ७ सबसे अधिक प्रभावी केन्द्र दोनों हाथों को ऊपर पहली अंगुली व अंगूठे के मध्य में लाइन सी बनती है। दिन में तीन बार पाँच मिनट तक मालिश की भाँति प्रेशर देने से सिर दर्द शीघ्र कम हो जाता है। इससे घुटने का दर्द भी शीघ्र कम हो जाता है। पेट को साफ रखना भी आवश्यक है। प्रातः काल रात को ताँबे के पात्र में भरा जल सुबह उठते ही एक किलो तक पीने से समस्त पेट के रोग शारीरिक रोग समाप्त हो जाते है। छः माह के अभ्यास से ही लाभ पूर्ण मिलता है। घुटने का दर्द समाप्त हो जाता है।

इस रोग से सम्बन्धित चेहरे पर आँखों की पलकें चित्र नं० ८ दोनों हाथों से भौएँ के मध्य में माथे पर अंगूठे व अंगुलियों से पकड़ कर चुका सैकण्ड के लिये हल्का–हल्का दबाना चाहिये, इस क्रिया से आँखों का दबाब कर हो जावेगा।

यदि कान, दाँत की कोई बीमारी हो तो या ब्लड प्रेशर रोग हो तो इन रोगों में हाथ–पैरों की अंगुलियों में रबड़ बैंड बाँधने से लाभ पहुँचता है। जीभ को आधा इंच बाहर निकालकर कुछ मिनटों के लिये दाँतों से दबाने से हाई ब्लड प्रेशर का सिर दर्द समाप्त हो जावेगा।

भोजन मे विटामिन डी,ई, पर्याप्त मात्रा में लेना चाहिये। (डी) दूध, घी, गाजर का जूस, मेली सूरजमुखी हरी पपीता, (ई) अंकुरित अनाज (चना, मूँग, गेहूँ) हरे साग पात बथुआ, मकडन, मटर, शकरकंदी, चोकर की रोटी खाना लाभप्रद है।

आधा शीशी (अर्द्ध सिरदर्द) हरड़ (छोटी) बहड़े आँवला सूखा तथा मिश्री ७० ग्राम चारों को लेकर बारीक चूर्ण बना लें। इन सबकी सात पुड़िया बना लें। सुबह निवृत्त होकर शहद के साथ खाऐं, तथा सात दिन तक बिना नमक की रोटी खावें, सात दिन के बाद सिर दर्द कभी नहीं होगा।

❊ ❊ ❊

सूचना

सिद्धयोग के सदस्यों को सूचित किया जा रहा है कि मार्च २००४ के अंक के साथ ही वार्षिक शुल्क समाप्त हो जायेगा। अतः सभी को चाहिये कि अगले वर्ष के लिये अपना शुल्क **व्यवस्थापक सिद्धयोग** अथवा **सम्पादक आचार्य दासलाल शर्मा** के नाम से प्रेषित कर दें। कागज, छपाई तथा प्रकाशन के सभी खर्च बढ़ रहे हैं। इसलिये न चाहते हुए भी शुल्क में वृद्धि करनी पड़ रही है। चौतरफा मंहगाई को देखते हुये अगले वर्ष से वार्षिक शुल्क १०० रु० द्विवार्षिक १६० तथा आजीवन पूर्ववत रहेगा। प्रतिवर्ष २५–३० हजार रु० के घाटे के बावजूद प्रकाशन चल ही रहा है क्योंकि यह पत्रिका गुरुदेव की स्मृति रूप में भी है तथा जिज्ञासुओं का कल्याण भी होता है। गुरु भाई बहिनों को चाहिये कि कम से कम पाँच नये ग्राहक अवश्य बनायें। लेखकों से भी निवेदन है लेख योगपरक हों। मत–मतान्तर व सम्प्रदाय के खण्डन–मण्डन से अलग रहकर लेख लिखे जायें।

शेष शुभ।

आपका–आचार्य दासलाल ब्रह्मचारी
सम्पादक सिद्धयोग

श्री प्रभुपद

दिनेश शर्मा, जरेरा दिल्ली

प्रभुजी मेरे खोलो ज्ञान कपाट
माया के चहुं फूल खिले है, भंवरा मन ललचाय।
गरम होय तनलेत उफाना, क्रोध की पंगत खाय।।

आँख खुली रहूँ मद में अंधी सत संगति न सुहाय।
काम बिगड़ जाय अगर किसी को मनवा अति हरसाय।।

लोभ व्याधि ने एसो जकड़ो नित नयो लालच आय।
करम का भोग-भोग कर मनवा अंदर ही पछिताय।।

माया बेलि पोंडि गई अबलो कंठ को रही दबाय।
काटो बेलि योग योगेश्वर योग का दीप जलाय।।

* * *

प्रभुजी योग की बात निराली !
योग का अमृत पीकर योगी हो जाये जग से न्यारी।
जग-जन का कल्यान करें वे योग की महिमा भारी।।

पग बिन चलें बिना मुख बोलें सुन लें बात हमारी।
बिन आँखें देखें जग सारा योग अमर की प्याली।।

योग पंथ पर चलना जैसे नंगी पड़ी दुधारी।
अजर अमर हो जाये वो नर पूर्ण योग जोधारी।।

धन्य-धन्य जयद्वै योगेश्वर जग जन राह सुझादी।
अबतो' खबर लेऊ मेरे प्रभु जी जग में झुकी अंधियारी।।

अकाल मृत्यु से रक्षा

प्रेषक–केशव देव उपाध्याय, वाराणसी

श्री सिद्धगुफा सवांई से सम्बन्ध रखने वाले हमारे सभी गुरूभाई बहन आदरणीय भाई श्री पुष्कर जी से अवश्य ही परिचित होंगे। अपने बाल्यकाल से ही इनका श्री गुरूदेव भगवान के श्री चरणों में अगाध प्रेम एवं श्रद्धा रही है। संस्कार वशात् जब भी मौका लगता श्री पुष्कर जी घर से चलकर श्री गुरूदेव भगवान के श्री चरणों में सत्संग लाभ करने चले जाते थे। मई का महीना चल रहा था। आदरणीय भाई श्री पुष्कर जी ने अपनी आदरणीया माता जी एवं अपने साथ पढ़ने–खेलने वाले मित्रों को बतला दिया था कि श्री गुरुदेव जी गंगा दशहरा का उत्सव मनाने अमुक तारीख को श्री योग साधन आश्रम ऋषिकेश पहुँच रहे हैं। उनके ऋषिकेश पहुँचने वाले दिन या एक दिन बाद मैं भी श्री योग साधन आश्रम ऋषिकेश अवश्य–अवश्य पहुँच जाऊँगा। कर्ण परम्परा से यह बात आदरणीय पुष्कर जी के परम पूज्य पिता जी को भी ज्ञात हो गयी। गंगा दशहरा से करीब दस दिन पूर्व इनके पूज्य पिता श्री मोतीराम शर्मा जी ने इन्हें अपने पास बुलाया एवं कहा कि चाहे मैं बार–बार मना करूँ तुम तो श्री ब्रह्मचारी जी के यहाँ गंगा दशहरा के उत्सव पर श्री योग साधन आश्रम ऋषिकेश धाम जाओगे ही। इसीलिये मैं तुम्हें ब्रह्मचारी जी के पास जाने से नहीं रोक रहा हूँ, तुम अवश्य ही ऋषिकेश जाकर गंगा दशहरा के उत्सव में जाकर सम्मिलित हो। एक बार तुमसे अवश्य कहना चाहता हूँ कि गंगा दशहरा के एक सप्ताह बाद तुम्हारी साली की शादी है, जिसका निमन्त्रण आया है, श्री ब्रह्मचारी जी से बता देना कि मेरी इच्छा है कि तुम उस शादी में सम्मिलित हो जाओ। कारण यह है कि मैं घर गृहस्थी के कार्यों में इतना व्यस्त हूँ कि जाने का समय नहीं निकाल पाऊँगा। यदि तुम नहीं गये तो निमन्त्रण छूट जायेगा एवं निमन्त्रण छोड़ना अच्छी बात नहीं है। अतः तुम श्री ब्रह्मचारी जी से आज्ञा लेकर अपने साली की शादी में अवश्य–अवश्य ही सम्मिलित हो जाना। भाई पुष्कर जी ने कहा कि मैं श्री गंगा–दशहरा के बाद श्री गुरूदेव से आज्ञा प्राप्त करने के बाद शादी में सम्मिलित होने का प्रयत्न करूँगा।

आराध्य देव श्री गुरूदेव जी महाराज गंगा दशहरा उत्सव के ठीक दस दिन पहले श्री योग साधन आश्रम ऋषिकेश पहुँच गये। उसके एक दिन बाद श्री पुष्कर जी भी श्री चरणों में श्री योगसाधन आश्रम ऋषिकेश पहुँच गये। आश्रम पहुँचकर श्री पुष्कर जी ने आराध्यदेव श्री सद्गुरुदेव जी महाराज के श्री चरणों में साष्टांग प्रणाम किया तो श्री गुरूदेव जी महाराज ने अपने श्री मुखारबिन्दु से कहा कि ठीक किया लल्ला ! समय से आ गये। खूब उत्साह से गंगा दशहरा का उत्सव मनाओ। जी, प्रभुजी कहकर भाई श्री पुष्कर जी ने उनकी आज्ञा पालन करने का वचन दिया। श्री सद्गुरु देव जी महाराज के संरक्षण में श्री योग साधन आश्रम ऋषिकेश का गंगा दशहरा का उत्सव आनन्द के साथ मनाया गया। श्री गंगा दशहरा उत्सव के बाद भी

हमारे गुरू भाई बहन काफी संख्या में आराध्य देव श्री सद्गुरू देव जी महाराज का सत्संग लाभ करके आश्रम पर रुके रहे। श्री सद्गुरूदेव जी महाराज नित्य प्रातःकाल अपने पच्चीस–तीस शिष्यों की मण्डली के साथ गंगा स्नान करने जाते थे एवं स्नान करके पूरी मण्डली के साथ वापस आकर अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड नायक परम योग योगेश्वर दादा गुरूदेव महाप्रभु श्री रामलाल जी महाराज की दिव्य आरती, गीता पाठ, गीता प्रवचन किया करते थे। उसके बाद भोजन विश्राम एवं सायंकालीन महिला सत्संग एवं श्री सद्गुरूदेव जी महाराज का प्रवचन होता था। श्री सद्गुरू देव जी महाराज प्राय: पूरे समय लौकिक दृष्टि से सदैव व्यस्त ही रहा करते थे। उत्सव की समाप्ति के बाद आदरणीय भाई श्री पुष्कर जी ने श्री गुरू देव जी के सम्मुख शादी में जाने के लिये कई बार प्रार्थना करनी चाही परन्तु उन्हें मौका ही नहीं मिला। वे उत्सव समाप्ति के दिन से ही प्रयत्न करते रहे किन्तु चौथे दिन तक उन्हें मौका नहीं मिल पाया। अब वे प्रार्थना करने के लिये आकुल व व्याकुल थे। पाँचवे दिन जब श्री गुरूदेव भगवान गंगा स्नान कर वापस आ रहे थे, जो भाई पुष्कर जी के मन में कई बार भाव आया कि आज साली की शादी में जाने वाली प्रार्थना श्री गुरूदेव के चरणों में अवश्य कर देनी चाहिये। उनके मन में यह भाव आते ही श्री गुरूदेव रास्ते में ही रुक गये एवं पुष्कर के दोनों कन्धों पर अपने दोनों वरदहस्त रखते हुए बोले, "कहो लल्ला, "क्या कहना चाहते थे।" इतना कहकर श्री गुरूदवे जी ने अपना कान श्री पुष्कर जी की तरफ कर दिया। श्री पुष्कर जी ने धीरे से कान में कहा कि श्री प्रभुजी ! पूज्य पिताजी ने आदेश दिया है कि आदरणीय ब्रह्मचारी जी से आज्ञा लेकर तुम अपनी साली की शादी में अवश्य चले जाना। भाई पुष्करजी की यह विनीत प्रार्थना सुनकर श्री सद्गुरू देव जी महाराज ने उनसे धीरे से कहा, "लल्ला। साले–साली की शादी का चक्कर छोड़ो एवं मेरे साथ आश्रम पर रहकर साधना करो।" आराध्य देव जी के मुखार बिन्दु से यह आज्ञा सुनकर श्री पुष्कर जी ने हाथ जोड़कर कहा कि जैसी आपकी आज्ञा प्रभुजी। श्री प्रभुजी ने कहा कि लल्ला ! कुछ और कहना है ? श्री पुष्कर जी ने हाथ जोड़कर कहा कि नहीं प्रभु जी, अब कुछ प्रार्थना नहीं करनी है। श्री गुरूदेव भगवान ने कहा कि जाओ लल्ला। अपने कमरे में जाकर आराम करो। श्री गुरूदेव भगवान की आज्ञा स्वीकार कर श्री पुष्कर जी श्री योग–साधान आश्रम ऋषिकेश की अपनी कोठरी में जाकर आराम करने लगे। आदरणीय भाई श्री पुष्कर जी ने बतलाया था कि श्री गुरूदेव भगवान की आज्ञा के बाद अपनी साली की शादी में जाने का विचार उनके मन से बिल्कुल–बिल्कुल निकल गया। ये प्रातः काल की बात का प्रसंग है।

अपने निवास स्थान श्री योग आश्रम की कोठरी में बैठे श्री पुष्कर जी को अभी एक घण्टा भी नहीं हुआ होगा कि हमारे आदरणीय गुरूभाई श्री पूर्णचन्द्र शर्मा जी ने उनकी कोठरी में प्रवेश किया एवं बोले कि श्री गुरूदेव भगवान ने आपको अभी बुलाया है। आदरणीय भाई श्री पुष्कर जी ने श्री गुरूभवन में प्रवेश कर श्री गुरूदेव भगवान को साष्टांग प्रणाम किया। आराध्य देव जी ने आशीर्वाद देने के बाद कहा कि लल्ला। अब मेरी यह आज्ञा है व तुम्हारे पिताजी की यही

इच्छा थी, अतः तुम अपनी साली की शादी में चले जाओ। इन्होंने जब साली की शादी में जाने से इन्कार किया तो आराध्य देव जी ने कहा कि लल्ला ! तेरा शादी में जाना नितान्त आवश्यक है। श्री गुरूदेव की दुबारा दी जाने वाली आज्ञा मानने से भी इन्होंने यह कहते हुए इन्कार किया कि प्रभु जी अब शादी में जाने का बिल्कुल ही मन नहीं बन रहा है। आराध्य देव जी ने कहा कि इसमें तुम्हारे मन की बात कहाँ से आ रही है। तुम तो हमारे आज्ञाकारी शिष्य हो। तुम्हारा लौकिक व पारलौकिक भला इसी में है कि तुम बिना सोचे विचारे हमारी आज्ञाओं का पालन करने का अपनी तरफ से भरपूर प्रयत्न करो। यदि तुम ऐसा करोगे तो तुम्हारा सब प्रकार से कल्याण ही कल्याण होगा।

तदन्तर श्री गुरूदेव ने अपने मुखारविन्द से आज्ञा प्रदान की लल्ला ! मैं तुम्हें अभी प्रसाद दे रहा हूँ। तुम सायंकाल ठीक चार बजे आश्रम से निकल जाना। इतना कहकर श्री गुरूदेव भगवान ने उन्हें काफी फल का प्रसाद दिया। इसके बाद जब भी पुष्कर जी ने साष्टांग प्रणाम किया तो श्री गुरूदेव भगवान ने आज्ञा प्रदान की कि जितनी बार प्रणाम करना हो, इसी समय एक बार, दो बार, बीस बार या सौ बार प्रणाम कर लो। जाते समय प्रणाम मत करना। कारण यह है कि जिस समय तुम यात्रा पर निकल रहे होंगे, उस समय मैं प्रवचन कर रहा हूँगा, अतः उस समय तुम्हारा प्रणाम करना उचित नहीं रहेगा। श्री पुष्कर जी प्रसाद लेकर प्रणाम किये एवं आश्रम की अपनी कोठी में चले गये। समयानुसार इन्होंने भोजन करके आराम किया ठीक चार बजे ससुराल की यात्रा आरम्भ की। इन्होंने आश्रम के मुख्य गेट से ही सिर झुकाकर प्रणाम किया। तदपश्चात् अपनी ससुराल की यात्रा आरम्भ की। आश्रम के पीछे की दिवाल वाली सड़क से ये स्टेशन की तरफ पैदल ही बढ़ रहे थे। कि इन्हें श्री गुरूदेव की ओजस्वी वाणी लाउडस्पीकर से सुनायी दी, कि लल्ला पुष्कर ! यदि हमारी यह आवाज सुन रहे हो तो तत्काल मेरे पास आ जाओ। उसके मात्र दो मिनट बाद फिर वही आवाज दुबारा श्री पुष्कर जी को सुनाई दी। दूसरी बार की आवाज सुनकर वे दौड़ते हुए चलकर श्री गुरूदेव भगवान के पास पहुँचकर उन्होंने श्री चरणों में सिर रखकर प्रणाम किया। उनके प्रणाम करने के बाद श्री आराध्यदेव जी ने अखिल ब्रह्माण्ड नायक परम योग योगेश्वर दादा गुरूदेव महाप्रभु श्री रामलाल जी महाराज के चिन्मय स्वरूप से एक माला निकाल कर श्री पुष्कर जी को पहना दी एवं कहा कि जाओ लल्ला ! अब अभय होकर जाओ, ये करूणा निधान श्री प्रभुजी सब प्रकार से तुम्हारी रक्षा करेंगे। श्री पुष्कर जी ने आराध्य देव श्री सद्गुरूदेव भगवान के चरणों में प्रणाम किया एवं अपनी यात्रा आरम्भ की।

आदरणीय भाई पुष्कर जी की ससुराल रोहतक स्टेशन के पास थी। रोहतक तक रेल या बस से जाना पड़ता है एवं वहाँ से उनकी ससुराल जाने का रास्ता सिर्फ पैदल ही उस समय था। ये योग साधन आश्रम ऋषिकेश से चलकर दूसरे दिन प्रातःकाल पाँच बजे दिल्ली पहुँच गये। दिल्ली–फिरोजपुर एक्सप्रेस ट्रेन से रोहतक की यात्रा का विचार कर इन्होंने रोहतक तक

का टिकट ले लिया एवं प्लेटफार्म पर जाकर खड़ी दिल्ली–फिरोजपुर एक्सप्रेस में सवार हो गये। चूँकि ट्रेन दिल्ली से ही चलती है, अतः ट्रेन में काफी जगह थी। या यूँ समझ लिया जाय कि ट्रेन का तीन चौथाई हिस्सा खाली ही था। अतः बोगी के अन्दर ऊपर बने सामान रखने वाले बर्थ पर अपना कम्बल इन्होंने बिछा लिया व सिर के नीचे अपना झोला रखकर सो गये। ट्रेन अपने निर्धारित समय प्रातः साढ़े छः बजे चल दी। आदरणीय भाई पुष्कर जी की पिछली रात वाली यात्रा कष्ट दायक थी एवं इन्हें रात भर जगना पड़ा था, अतः बर्थ पर लेटते ही इन्हें गहरी नींद आ गई। करीब आठ बजे जब इनकी नींद खुली तो रेलगाड़ी रोहतक रेलवे स्टेशन से आगे की यात्रा के लिये अपनी पूरी स्पीड से चल रही थी। नींद खुलने के बाद श्री पुष्कर जी ने अपने आस–पास बैठे यात्रियों से पूछा कि गाड़ी किस स्टेशन से छूटकर आगे की यात्रा के लिये चली है, तो यात्रियों ने बतलाया कि गाड़ी रोहतक स्टेशन से आगे की यात्रा के लिये चल रही है। अगला स्टेशन करीब पन्द्रह किलोमीटर बाद था, शादी का दिन आज ही था। अगले स्टेशन से भी इनकी अपनी ससुराल पैदल ही जाना था और अगले स्टेशन से उतर कर समय से ससुराल पहुँचना कदापि सम्भव नहीं था। इन विचारों ने इनके बहु आयामी मन पर मात्र एक मिनट में ही हलचल मचा दी।

इन्होंने निर्णय किया कि यदि समय से ससुराल पहुँचना है तो हमें गाड़ी से नीचे कूद जाना चाहिये। इतना विचार पक्का होते ही ये दिल्ली–फिरोजपुर एक्सप्रेस ट्रेन से जो अपनी पूरी रफ्तार पचास मील प्रति घण्टे की चाल से चल रही थी, अपना झोला लेकर कूद गये। ये जब गाड़ी से कूदने के लिये तेजी से गेट की तरफ बढ़ रहे थे तभी रुक जाओ, रुक जाओ एवं जब ये ट्रेन से कूदे तो यात्रियों की यह बात इन्हें सुनाई दी कि यह लड़का आत्महत्या करने जा रहा है। खैर भाई पुष्कर जी ट्रेन से कूद ही गये।

महान अप्रत्याशित एवं अलौकिक कृपा की घटना घटित हुई। श्री गुरुदेव आकाश में स्थूल रूप से प्रकट हो गये एवं इन्हें बिना स्पर्श किये जमीन पर अच्छी प्रकर से खड़ा कर दिया।

आदरणीय भाई पुष्कर जी जिस समय तेज रफ्तार से चलने वाली दिल्ली–फिरोजपुर एक्सप्रेस ट्रेन से रोहतक स्टेशन से आगे कूदे, उस समय प्रातःकल सवा आठ बजे का समय था। एक किसान अपने नौजवान लड़के के साथ रेल लाइन के किनारे स्थित अपने खेत में काम कर रहा था। साथ ही जी०आर०पी० के दो सिपाही अपनी बन्दूक के साथ रेलवे लाइन की पैट्रोलिंग कर रहे थे एवं यह स्थान कूदने वाले स्थान से मात्र सौ गज के आस–पास था। आदरणीय भाई श्री पुष्कर जी को श्री गुरुदेव भगवान के दर्शन नहीं हुए, परन्तु ऐसा स्पष्ट अनुभव हो रहा था कि अतुलनीय प्रकाश में चारों तरफ घिरकर खड़े हैं जी०आर०पी० के दोनों सिपाहियों को भी करीब पाँच मिनट तक श्री पुष्कर जी के पास अगाध प्रकाश दिखलाई देता रहा। अपने नौजवान पुत्र के साथ खेत में काम करने वाले वृद्ध किसान ने अपनी खुली आँखों से स्पष्ट देखा कि एक गठीले बदन के नाटे कद के योगी ने इनको पकड़कर जमीन पर खड़ा

किया है व करीब पाँच मिनट तक जब तक ये स्थिर मन नहीं हुए वहीं आकाश में इनके पास ही विराजमान रहे एवं फिर अन्तर्ध्यान हो गये। गश्त के सिपाही श्री पुष्कर जी को पकड़कर थाने ले गये। गवाह के रूप में किसान भी साथ ले लिया। पुलिस अधिकारी ने पुष्कर जी से प्रश्न किया कि क्या परेशानी है ? क्यों आत्महत्या करना चाहते हो ? आदरणीय भाई श्री पुष्कर जी ने अधिकारी से निवेदन किया कि साहब मैंने आत्महत्या करने की नीयत से ट्रेन से छलांग नहीं लगायी। मुझे रोहतक स्टेशन पर उतर कर अपनी रिश्तेदारी में जाना था, परन्तु मेरी नींद तब खुली जब ट्रेन आगे वाले स्टेशन के लिये रोहतक स्टेशन से चल चुकी थी। अतः मैंने इस नीयत से छलांग लगाई कि यदि मैं रोहतक स्टेशन पर उतर लिया तो मुझे काफी पैदल चलना पड़ेगा, इसी कारण मैं ट्रेन से कूद पड़ा। उनका यह उत्तर सुनकर अधिकारी ने आश्चर्य सहित पूछा कि पचास मील की रफ्तार से चलने वाली रेलगाड़ी से कूदने के बावजूद तुम सुरक्षित कैसे बच गये। श्री पुष्कर जी ने कहा कि मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि कूदने के बाद किसी ने हमारे दोनों कन्धों को मजबूती से पकड़कर हमें जमीन पर खड़ा कर दिया। उसने (अधिकारी) प्रश्न किया कि क्या उस अदृश्य शक्ति को आपने देखा। इसके पहले कि श्री पुष्कर जी प्रश्न का उत्तर देवें, उस किसान ने कहा कि साहब। इनकी प्राण रक्षा करने वाली दिव्य शक्ति को हमने अपनी आँखों से प्रत्यक्ष देखा है। उक्त अधिकारी ने कहा कि हमें विस्तार से पूरी घटना का वर्णन बतलाओ। उस प्रत्यक्षदर्शी किसान ने कहा कि साहब मेरा खेत रेल लाइन से बिल्कुल सटा हुआ है। मैं और मेरा लड़का सबेरे सात बजे से ही खेत में काम कर रहे थे, लगभग सवा आठ बजे जब यह ट्रेन हमारे खेत के पास से गुजर रही थी मैं ट्रेन की तरफ ही देख रहा था। यह लड़का पूरी चाल से चलती ट्रेन से कूदा तथा उस समय इस लड़के के चारों तरफ इतना अतुलनीय तेज प्रकाश था कि ट्रेन से कूदते समय लड़का नहीं बल्कि वह तेज प्रकाश ही दिखलायी दे रहा था। उस प्रकाश पर आँखें नहीं टिक पा रही थीं, अर्थात् उस प्रकाश में आँखें चकाचौंध हो जाती थी। मैं लगातार यह दृश्य देखता रहा । जब प्रकाश कुछ कम हुआ तो हमने देखा कि नाटे कद के एक महात्मा जो धोती कुर्ता पहने हुए थे, ने इसके दोनों कन्धे पकड़कर इन्हें जमीन पर खड़ा किया फिर अन्तर्ध्यान हो गये। उस शक्ति ने ही इस बालक की प्राण रक्षा की है। रेलवे का वह अधिकारी उस किसान की बातों को ध्यान से सुनता रहा एवं उसकी बातें सुनते समय नीचे से ऊपर तक आदरणीय भाई श्री पुष्कर जी को अपलक नेत्रों से देखता रहा। उसने फिर श्री पुष्कर जी से प्रश्न किया कि तुमने कोई इष्ट रखा है क्या ? श्री पुष्कर जी ने कहा, नहीं साहब मेरा कोई इष्ट वगैरह नहीं है। वैसे मैं एक सर्व समर्थ सिद्ध योगिराज का शिष्य हूँ, एवं वह सिद्ध योगिराज हमारे गुरूदेव कष्ट एवं संकट की जब पराकाष्ठा हो जाती है तो कहीं भी एवं कभी भी स्थूल रूप से वहीं प्रकट होकर अपने शिष्य की रक्षा किया करते हैं। आज भी अदृश्य रूप से प्रकट होकर हमारे श्री सद्गुरूदेव जी महाराज ने ही हमारी रक्षा की है। अन्यथा मेरा प्राणान्त अवश्य ही हो गया होता। उस समय श्री पुष्कर जी के गले में रक्षा कवच

के रूप में वह माला पड़ी थी, जिसे श्री गुरूदेव जी महाराज ने यात्रा आरम्भ करते समय पहनायी थी।

उस रेल अधिकारी ने जब आदरणीय भाई श्री पुष्कर जी से पूछा कि आप के श्री गुरूदेव कहाँ रहते हैं ? उनसे कब व कहाँ मिला जा सकता है तो श्री पुष्कर जी ने उस रेल अधिकारी को पूरी जानकारी दी। उसके बाद वह रेल अधिकारी जी०आर०पी० के उन दो सिपाहियों की तरफ मुखातिब हुआ जो श्री पुष्कर जी को साथ लेकर अधिकारी के पास पहुँचे थे। उसने सिपाहियों से कहा कि हरामजादों। इस पवित्र एवं पुण्यात्मा बालक को पकड़कर तुम लोग हमारे पास सजा दिलाने की नीयत से लाये हो, तुम्हें शायद पता नहीं है कि तुमने कितना बड़ा पाप किया है। इनके चरण–स्पर्श कर प्रणाम करो। सिपाहियों ने वैसा ही किया। इसके बाद उस अधिकारी ने भी हाथ जोड़कर श्री पुष्कर जी को प्रणाम किया एवं कुछ दक्षिणा देना चाहा। श्री पुष्कर जी ने विनीत भाव से कहा कि साहब मैं दक्षिणा लेने का अधिकारी नहीं हूँ। यदि आप दक्षिणा देना चाहें तो श्री योग साधन आश्रम जाकर श्री गुरूदेव के चरणों में प्रणाम करें एवं उन्हें ही दक्षिणा देवें। इसके बाद अधिकारी से सादर विदा लेकर श्री पुष्कर जी अपने ससुराल पहुँच गये। अतः किसी गुरू–भक्त ने ठीक ही लिखा है :–

"श्री सद्गुरू रक्षति सर्वदा"।

❊ ❊ ❊

शोक संवेदना

हमें यह सूचित करते हुये दुःख हो रहा है कि हमारे एक पुराने गुरुभाई श्री चिन्तामणि पाण्डेय (उन्नाव) का देहावसान १५ दिसम्बर को हो गया है। सिद्धयोग परिवार एवं आश्रमवासी इस शोक से संतप्त हैं। श्री पाण्डेय जी ने एक योग संस्थान 'प्रभु रामलाल योगाश्रम' नाम से शुक्ला गंज उन्नाव में खोल हुआ है। जहाँ प्रतिवर्ष वार्षिक योग महोत्सव मनाया जाता है। अब उनके परिवार में बड़े सुपुत्र चि० चन्द्रकान्त पाण्डेय है। श्री प्रभु जी से प्रार्थना है कि शोक संतप्त परिवार को इस महान दुःख को सहन करने की शक्ति दें।

—सम्पादक सिद्धयोग

झाँसी योग एवं संगीत सम्मेलन में श्री गुरुदेव की अहैतुकी कृपा वृष्टि

प्रेषक—कृष्णकान्त झा

सन् १९७४ का वह पावन दिवस जब परम करुणा निकेतन सद्गुरुदेव भगवान योगिराज श्री चन्द्रमोहन जी महाराज ने आल्हादित हृदय से प्रभु श्री रामलाल संगीत महाविद्यालय की झाँसी में स्थापना का आदेश दिया, किसे पता था कि उनके इस आदेश में विद्यालय और संगीत के माध्यम से हजारों लोगों के सर्वतोन्मुखी कल्याण एवं कृपाओं का संकल्प निहित था जो आज भारतवर्ष ही नहीं सारे विश्व में संगीत के माध्यम से सत्संग की सुगन्ध बिखेर रहा है और आज भी विद्यालय द्वारा आयोजित कार्यक्रमों में प्रभु की करुणकृपा अनेक चमत्कारिक घटनाओं के रूप में दृष्टिगोचर हो रही है जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण है २७वाँ वार्षिकोत्सव। संगीत और योग का अटूट सम्बन्ध है और तभी कहा गया है—

"नासनं सिद्ध सदृश न कुभः केवलोपयः
न खेचरी समान मुद्रा न नाद सदृशोलयः"।

इस वर्ष के कार्यक्रम के चारों दिन का शुभारम्भ प्रातःकाल पाँच बजे श्री महाप्रभु जी की मंगलाचरण आरती से होता था। आरती के पश्चात् एक घण्टे 'जीवन तत्व साधन' और फिर आचार्य चन्द्रहास जी शर्मा एवं आदरणीय भाई श्री भुवनेन्द्र जी झा के निर्देशन में प्राणायाम की विभिन्न साधनायें कराई गईं जिनके त्वरित परिणाम सामने आये। गुरु भाई बहनों की बात तो अलग जिज्ञासुओं तक को ध्यान स्थितियाँ प्राप्त हुई। चार दिन की इस साधना से अनेक लोगों को जटिल रोगों में भी लाभ हुआ और सद्गुरुदेव की अलौकिक कृपा की प्रत्यक्ष अनुभूतियाँ हुईं।

प्राणायाम की साधना के पश्चात् विद्यालय के सत्संग मण्डल द्वारा मधुर भजन एवं संकीर्तन ने समस्त वातावरण को भक्ति रस की धारा में डुबोये रखा। ८.३० बजे प्रातःकाल श्री प्रभु जी की आरती के पश्चात् श्री आचार्य चन्द्रहास जी द्वारा गुरुगीता का विश्लेषणात्मक पाठ सभी को बहुत भाया। इसी के साथ आदरणीय भाई श्री भुवनेन्द्र जी झा द्वारा श्री मद्भगवतगीता का मधुर वाणी में पाठ ने सारे वातावरण को आध्यात्मिक एवं भक्ति रस में सराबोर कर दिया। सद्गुरु सत्ता के सामर्थ्य एवं सद्गुरुदेव भगवान योगिराज अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज की अहैतुकी कृपा के दृष्टान्तों से परिपूर्ण आचार्य श्री चन्द्रहास जी के प्रवचनों को सुनने के लिए चारों दिन भारी भीड़ उमड़ती रही।

प्रारम्भ के दो दिन अर्थात् २८ व २९ अक्टूबर २००३ में संगीत प्रतियोगिताएँ आयोजित थी जिसमें झाँसी के तथा बाहर से आये हुये लगभग १७० संगीत के छात्र–छात्राओं ने भाग लिया। कैसा आल्हादपूर्ण दृश्य था, जब प्रत्येक प्रतियोगी पहले श्री प्रभु चरणों में नमन करता था और तब प्रतियोगिता के मंच पर बैठता था। सभी प्रतियोगियों को स्वल्पाहार, आवास एवं भोजन की व्यवस्था प्रतिवर्ष प्रभु श्री रामलाल संगीत महाविद्यालय की ओर से होती है और सभी प्रतियोगियों को पुरस्कार एवं प्रमाण–पत्र प्रदान किये जाते हैं।

पुरस्कार पाने के पश्चात् जब प्रत्येक प्रतियोगी प्रभु चरणों में प्रमाण–पत्र एवं पारितोषिक रखकर प्रणाम करता तो सभी साधक भाई–बहनों के मन आल्हादित हो उठते कि हे प्रभु ! इन अबोध बालक बालिकाओं पर भी इनके अनजाने में ही तुम किस कृपा की वृष्टि कर रहे हो तुम ही जानो, इनके कौन से क्लिष्ट और क्लिष्टतम संस्कार निपटा रहे हो तुम ही जानो, इनका किस जन्म का तुम्हारे चरणों से नाता है या आज से कितने जन्मों के लिये तुम्हारे चरणों में संस्कार बन गया है तुम ही जानो। योग प्रचार का इससे और सरल क्या साधन होगा।

कार्यक्रम के अन्तिम दो दिन अर्थात् ३० एवं ३१ अक्टूबर २००३ में अखिल भारतीय शास्त्रीय संगीत का सम्मेलन हुआ जिसका उद्घाटन झाँसी के कमिश्नर श्री सी०एन०दुबे द्वारा किया गया। जिसमें अध्यात्म से परिपूर्ण गायन, वादन एवं नृत्य के राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के अनेक कार्यक्रम सम्पन्न हुये। इस वर्ष के संगीत सम्मेलन में कलकत्ता के चिरदीप बनर्जी (तबला वादन) रामपुर के पं० रामजीलाल शर्मा (मृदंगाचार्य) बम्बई के श्री गुरुदेव भगवान के कृपा पात्र पं० अनुपम राय, रूचि शर्मा, रीता राय, अनुरीता राय (गायन, वादन, नृत्य) कानपुर के पं० विनोद कुमार द्विवेदी (ध्रुपद गायक) आगरा के मनोज कुमार शर्मा (तबला) लखनऊ के पं० श्रीष कुमार मिश्रा (मयूर इसराज वादन) ग्वालियर के पं० रामचन्द्र भागवत (वायलिन वादक) लखनऊ के श्री राजेन्द्र (तम्बूर वीणा) बाँदा के उस्ताद जहीर खाँ (सारंगी वादन) गुलाम जाफर खाँ (ढोलक) आदि कलाकारों ने अपनी कला की श्रेष्ठतम प्रस्तुति श्री प्रभुजी के चरणों में करके श्रोताओं एवं दर्शकों को अपने सम्मोहन में बाँधे रखा।

सम्मेलन में भाग लेने वाले कुछ कलाकारों द्वारा व्यक्त उद्गार

पं० श्रीष कुमार मिश्रा, लखनऊ–"२५वें बुन्देलखण्ड संगीत सम्मेलन में मैंने अपना पहला कार्यक्रम प्रस्तुत किया था गुरुदेव की कृपा से घर पहुँचते ही इंग्लैण्ड की महारानी एलिजाबेथ सहित अनेक राष्ट्राध्यक्षों ने मुझे अपनी कला प्रदर्शन करने हेतु आमंत्रण भेजे। हर पल गुरूदेव की छवि नेत्रों के समक्ष झूलती रहती है।"

पं० अनुपम राय, बम्बई–"सन् १९७८ में जब मरणासन्न हो गया था सारे डॉक्टरों ने जवाब दे दिया था जीवन की कोई आशा शेष नहीं बची थी तब माघ मेले में पधारे हुए

सद्गुरूदेव भगवान ने घर से बुलाकर सारे कष्टों को तुरन्त नष्ट कर जीवन दान दिया। ये शरीर उन्हीं का दिया हुआ है। जब तक सांस रहेगी उनके कार्यक्रम में हाजिरी लगाने आता रहूँगा संगीत तो क्या यदि आवश्यकता पड़ी तो प्रभु दरबार में झाड़ू लगाने के लिए भी तैयार हूँ।"

श्री पन्नालाल जैन (अन्तर्राष्ट्रीय सितार वादक)–"प्रथम सम्मेलन में ही सद्गुरूदेव भगवान ने मुझे जीवन दान दिया मेरी पुत्री को दारूण व्यथा से छुटकारा दिलाया। सितार का कार्यक्रम देने अमेरिका जाना था। वीजा मिलने में अनेक बाधाऐं आ रही थीं तभी हिन्दी न समझने वाले विदेशी पासपोर्ट अधिकारी को मैंने उसी समय रची हुई गुरूदेव की स्तुति की एक कविता सुनाई। घोर आश्चर्य दूसरे ही दिन वीजा प्राप्त हो गया"।

विनोद कुमार द्विवेदी (ध्रुपद गायक, कानपुर)–"कार्यक्रम प्रस्तुत करते समय सारे प्रांगण में गुरूदेव के नख से निकला हुआ तेज प्रकाशित होता हुआ दिखाई दे रहा था मन आल्हाद से भरा हुआ है।"

३१ अक्टूबर २००३ को दिन में विशाल भण्डारे का आयोजन था इस भण्डारे में हजारों गुरू–भाई बहनों ने प्रसाद गृहण किया। इस कार्यक्रम में इलाहाबाद, कानपुर, सुल्तानपुर, मिर्जापुर, उरई, कालपी, सैदाबाद, बलिया, आगरा, ग्वालियर, लखनऊ, ऋषिकेश आश्रम एवं संवाई आश्रम से सैकड़ों की संख्या में गुरू भाई–बहन पधारे जिनमें उल्लेखनीय भाई पूरनचन्द जी ऋषिकेश आश्रम, प्रेमचन्द जी सविता एवं अन्य अनेक कानपुर के भाई जिनका अमूल्य सहयोग प्रातःकाल के कार्यक्रमों में प्राप्त होता रहा। कालपी के पं० चन्द्र किशोर दुबे एवं वीरेन्द्रसिंह जी, लखनऊ के श्री श्यामलाल जी अग्रवाल, बलिया के श्री त्रिपुरारी पाण्डे, लखनऊ के ही श्री निगम, विशेष रूप से सहयोग प्रदान करते रहे। उन परम करुणा निकेतन अपने बच्चों पर सहज ही कृपालु पतितपावन सद्गुरूदेव योगिराज अनन्त श्री चन्द्रमोहन जी महाराज के पावन चरणों में बार–बार प्रार्थना है कि वे विद्यालय के समस्त छात्र–छात्राओं, सत्संग मण्डल और गुरू भाई–बहनों पर अपनी करुणा कृपा की दृष्टि बनाये रखें। विद्यालय को सतत् नाद योग के प्रचार का माध्यम बनाये रखें एवं यह कार्यक्रम अनन्त काल तक अनवरत रूप से इसी प्रकार चलता रहे।

* * *

जिस भाग्यवान पुरुष की आत्मा में रति हो गयी है, जिसका मन पूर्ण और शुद्ध है और जिसे अनुत्तम विश्राम प्राप्त हो गया है उसके लिए इस संसार में कोई भी कामना वस्तु नहीं रह जाती'।

आहार-शुद्धि

(स्वामी कृष्णबोधाश्रम जी)

आजकल लोग कहते हैं कि खाने पीने से क्या होता है : किन्तु वे यह नहीं देखते कि खाने–पीने पर ही तो सब कुछ निर्भर है। अंग्रेज भारत में आये किस लिये, खाने–पीने के लिये ही न ? जर्मन–युद्ध भी किसलिये हुआ ? खाने–पीने के लिये ही। युद्धों के पन्ने रँगे पड़े हैं, कारण ? खाने–पीने के लिये ही। एक सिपाही हमसे कह रहा था कि हमने अफ्रीका में पानी पीने के लिये ही युद्ध किया, हमें पीने को पानी भी नहीं मिल रहा था।

अब अन्न के विषयों में सोचिये। आप बाजार में खाते हैं। मिठाई, पूरी आदि पर एक भिखारी की भी दृष्टि पड़ती है। गर्म–गर्म देखकर उसका मन ललचाता है, मुँह में पानी भर आता है, पर वैसा न होने के कारण वह खा नहीं पाता। भिखारी का जैसा मन था, उसका संस्कार एवं प्रभाव उस वस्तु पर पड़ा ही। आपने यदि वह वस्तु खरीदकर खा ली तो वह आपके शरीर में वैसा ही संस्कार डालेगी। वैसी ही बुद्धि बना देगी, जैसी भिखारी की थी। इसलिये जहाँ तक हो सके, इस प्रकार की वस्तुओं का परित्याग करना चाहिये।

उद्दालक ने श्वेतकेतु को बताया कि अन्न से मन बनता है–'जैसा खाया अन्न, वैसा बना मन।' श्वेतकेतु ने प्रश्न किया–'अन्न तो स्थूल है, तब उससे सूक्ष्म मन कैसे बना ? उद्दालक ने कहा–'हम जो खाते हैं, उसके तीन भाग बनते हैं। अन्न का स्थूल भाग तो मल बनता है, मध्यम भाग से मांस बनता है तथा उसके सूक्ष्मतम भाग से मन बनता है। ऐसे ही जल के भी तीन भाग बनते हैं। स्थूल भाग से मूत्र, अन्न सार मिश्रित मध्यम भाग से रक्त आदि तथा वायु मिश्रित सूक्ष्म भाग से ओज, रेत, प्राण आदि बनते हैं। जब प्यास लगती है तब कहते ही हैं कि भाई ! प्यास के मारे प्राण निकल रहे हैं। इसी प्रकार दुग्ध, घृत आदि के भी तीन भाग बनते हैं। अस्थि, मज्जा, वाणी आदि भी इन्हीं पंचतत्वों से बनते हैं।'

इस पर श्वेत केतु ने कहा–'मैं इसे अभी ठीक समझ नहीं पाया।' तब उद्दालक ने कहा–'तुम पन्द्रह दिन बिना अन्न के केवल पानी पीकर ही रहो।' उसने ऐसा ही किया। सोहलवें दिन उद्दालक ने आकर उससे पूछा– 'बताओ तो तुम कैसे रहे ? पंद्रह दिन पहले की बात सुनाओ।' उसने कहा–'अब तो मुझे स्मरण नहीं रहा; क्योंकि अन्न तो खाया नहीं, अन्न से मन बनता है।' तब उद्दालक ने कहा–'जाओ खाना खाकर आओ।' खाने के पश्चात् जो कुछ पूछा गया, वह सब उसने बतला दिया। तब उद्दालक ने कहा–'अन्न न खाने से मन नष्ट हो रहा था और पानी पीने से प्राण बचे रहे।' इसलिये आप यदि शुद्ध अन्न, जल, घी, खान–पान में लाते हैं तो स्वप्न में भी विकार उत्पन्न नहीं हो सकते। यदि वे अपवित्र या अमर्यादित ढंग से खाने–पीने में लाये जायेंगे तो निश्चय ही किसी न किसी प्रकार का विचार दिखायी देगा ही।

एक ब्राह्मण ने हमसे एक बार प्रश्न किया कि 'स्वामीजी ! न मालूम क्या हुआ, रात्रि में मुझे

बुरा स्वप्न दिखायी दिया। मुझे अनेक भूतों ने रात को मारा, जिससे मैं बहुत डर गया हूँ।' हमने पूछा— 'सत्य कहिये कि कल आपने क्या खाया ?' उत्तर मिला—'गर्म-गर्म पराठे।' हमने कहा—'वे पराठे ही रात को भूत बन गये और उन्होंने ही आपके मन पर प्रभाव डाल दिया। आप जैसा अन्न खाते हैं, वैसा ही मन बनता है। मनुष्य कामी का अन्न खाने से कामी, लोभी का अन्न खाने से लोभी तथा ज्ञानी का अन्न खाने से ज्ञानी बन जाता है। इस कारण खान-पान का विशेष ध्यान रखना चाहिये।

पाश्चात्य देशों में युद्ध अधिक होने का कारण उनका तामसिक भोजन ही है, जिससे एक दूसरे का माल, राज्य छीनने की कुबुद्धि उत्पन्न होती है और विकराल युद्ध होता रहता है। इसीलिये ऋषियों ने कच्चे, पक्के अन्न का विचार रखा, चौका लगाकर खाने का विधान किया और भोजन के अनेक नियम बनाये। इन सबका यही सार है कि शुद्ध अन्न, जल तथा घी-दूध का प्रयोग करो, जिनसे मन, प्राण तथा वाणी शुद्ध रहें। संसार में जितने भी अन्वेषण होते आये हैं, वे सब इन्हीं के कारण हुए हैं।

कुछ लोग प्रश्न करते हैं कि हमारी बुद्धि में ज्ञान की बातें नहीं रुचतीं, इसका क्या कारण है ?' समाहित चित्त होकर विचार करने पर ज्ञात होगा कि सब खान पान का ही प्रभाव है। आप ऐसा अन्न खाते हैं जिस पर बुभुक्षित भिखारियों की बुद्धि विचलित हो जाती है, पानी पीते हैं नलों का, घी की तो पूछिये ही नहीं, कोटोजम, डालडा मिल रहा है। इसी कारण आपका मन, प्राण, तेज, वाणी, बुद्धि सब नष्ट हो रहे हैं। इसका फल भी आप स्वयं निश्चित कर सकते हैं।

हम तो शास्त्रों के मानने वाले हैं। उसके प्रतिकूल कुछ जानते ही नहीं तो कहें कहाँ से। एक बार माता पार्वती ने शंकर जी से पूछा—'संसार में मेरे पुत्र अत्यन्त पीड़ित हैं, क्या कारण है ?' जगत्-पिता शंकर ने कहा— 'देवि ! ये तेरे पूत बड़े कुपूत हैं, अपने माँ-बाप का कहना नहीं मानते। जिस प्रकार गृहपति गृह के लिये, ग्रामपति ग्राम के लिये और राष्ट्रपति राष्ट्र के लिये नियम बनाता है, उसी प्रकार हमने भी जगत् के लिये नियम बनाये और सब बातों का विचार कर तीन वस्तुओं का निर्माण किया—अन्न, जल और औषध; किन्तु इन्होंने उसका सदुपयोग नहीं किया, इसीलिये पीड़ित है।'

शास्त्र में उपदेश देने के तीन प्रकार बतलाये गये हैं—पहला तो इस प्रकार से समझाया जाता है, जिस प्रकार पति कान्ता को समझाता है, उसे ही कान्तासम्मित उपदेश कहते हैं। दूसरा इस प्रकार समझाया जाता है, जैसे मित्र मित्र को समझाता है कि अमुक कार्य करने में पुण्य है, इसे करो, इसमें पाप है, इसे न करो—इसे सुहृत्-सम्मित कहते हैं। तीसरा राजाज्ञा है कि बस, जो एक बार कह दिया वही ठीक है और शिरोधार्य होती है, इसे प्रभु-सम्मित कहते हैं। हमारा सनातन उपदेश तीसरे प्रकार की राजाज्ञा के समान है—वेद की वाणी अवश्य माननी चाहिये।

* * *

शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्

डा० शरण प्रसाद

श्रम का महत्त्व—जीवन में भोजन तथा श्रम का समान महत्त्व है, यह बात प्रायः सभी जानते हैं। जब कोई व्यक्ति चिकित्सक के सम्मुख उपस्थित होता है, तब वह अपनी शक्ति तथा वजन बढ़ाने के लिये डाक्टर से केवल आहार की बात पूछता है। चिकित्सक भी सुरुचिपूर्वक केवल पौष्टिक खान–पान ही बताता है। वह घी, दूध, मक्खन, सूखे फल तथा मेवे सेवन करने की सलाह देता है; किन्तु चिकित्सक तथा रोगी दोनों यह भूल जाते हैं कि उपयुक्त श्रम के बिना अच्छे–से–अच्छे पौष्टिक आहार का कोई उपयोग नहीं है। उल्टे वह शरीर के लिये भार बनकर रोग उत्पन्न करता है।

आधुनिक युग में श्रम के अभाव में आलस्य के कारण विभिन्न प्रकार के रोगों की उत्पत्ति हुई है। ऐसे बहुत से लोग हैं, जिन्हें जीवन में कभी भी सच्ची भूख की अनुभूति नहीं हुई। आज भी छोटे–छोटे शहरों तथा बड़े देहातों में आटे की मशीन (चक्की), पानी का नल, कपड़ा धोने के लिये धोबी आदि सुलभ हैं; किन्तु कुछ वर्ष पहले खासकर देहातों के अनेक घरों में प्रातःकाल उठते ही मधुर गीत और चक्की की आवाज सुनायी पड़ती थी। देहात की बहनें पानी से भरे हुए तीन घड़े एक साथ सिर पर रखकर घर लाती थीं, जो कशेरुका की मणिकाओं के लिये श्रेष्ठ व्यायाम है। वे कपड़ा धोती थीं, मक्खन निकालने का श्रम भी करती थीं। चक्की आदि चलाने से स्त्री रोगों की उत्पत्ति कम होती थी तथा प्रसूतिकाल में भी बहनों को कम कष्ट होता था। आजकल जिस घर में मोटर होती है, उस घर में डाक्टर का आना भी प्रारम्भ हो जाता है; क्योंकि मोटर रहने के कारण पैदल चलना–फिरना लगभग बंद हो जाता है।

यों भी समाज में श्रम की प्रतिष्ठा नहीं है। जो कम श्रम करके अधिक पैसा कमाता है, उसे समाज में अधिक प्रतिष्ठित माना जाता है। जो बेचारे किसान–मजदूर लगातार आठ से बारह घंटे तक श्रम करते हैं, ईमानदारी की रोटी खाते हैं, उनकी समाज में बहुत कम प्रतिष्ठा है या बिल्कुल नहीं है। योग्य श्रम करने से हमारी पाचन प्रणाली मल–विसर्जन तथा पाचनक्रिया दोनों कार्यों को ठीक तरह से करती है। शरीर को शुद्ध एवं स्वस्थ रखने के लिये प्रत्येक के जीवन–क्रम में श्रम को उचित स्थान मिलना चाहिये।

हाँ, आमतौर से यह सुनने को अवश्य मिलता है कि व्यायाम के लिये समय का सम्पूर्ण अभाव है। सिनेमा, होटल तथा क्लबों में जाने के लिये सरलता से समय निकाल सकते हैं, किन्तु व्यायाम के लिये समय के अभाव की शिकायत सनातन है।

यह भी एक महत्त्वपूर्ण बात है कि बचपन से भोजन की आदत होने के कारण मनुष्य को भोजन छोड़ने में जैसे कठिनाई होती है, ठीक उसी प्रकार जो व्यक्ति नियमित श्रम या व्यायाम

करता है उसे व्यायाम या श्रम छोड़ने में कठिनाई होती है। एक परिवार में जो बालक नियमित रूप से व्यायाम करता है, वह अपने अन्य भाई–बहनों की तरह सामान्य आहार लेकर भी अधिक स्वस्थ रहता है। कमजोर व्यक्ति शक्ति के अनुसार नियमित व्यायाम करके सामान्य आहार लेते हुए भी पर्याप्त मात्रा तक अपनी शक्ति बढ़ा सकता है।

व्यायाम अप्राकृतिक, श्रम प्राकृतिक–एक किसान या मजदूर कभी व्यायाम करता हुआ नहीं मिलता, क्योंकि उसके दैनिक काम में ही पूरा श्रम या व्यायाम हो जाता है। ज्यों–ज्यों मानव का जीवन प्रकृति से दूर होता गया, त्यों–त्यों उसने विभिन्न प्रकार के व्यायाम का आविष्कार किया। एक किसान खोदता है, मिट्टी उठाकर फेंकता है, वह पेड़ में पानी देता है, लकड़ी तोड़ता है। चक्की चलाना, मक्खन निकालना, कुएँ से पानी भरकर लाना–ये सब स्त्रियों के सर्वोत्तम व्यायाम हैं। हमारे दैनिक जीवन–क्रम में कुछ घण्टे ऐसे बिताने चाहिये, जिससे सहज श्रम हो जाय। हम लोग दण्ड–बैठक, दौड़ने आदि का व्यायाम करेंगे, किन्तु काम–काज में संकोच होता है।

उत्पादक तथा अनुत्पादक व्यायाम– सामान्यतः व्यायाम दो प्रकार के होते हैं–एक उत्पादक व्यायाम और दूसरा अनुत्पादक व्यायाम।

१. **उत्पादक व्यायाम**–इनमें वे सभी क्रियाएँ सम्मिलित की जा सकती हैं, जिनमें व्यायाम के साथ–साथ उत्पादन भी हो। जैसे–खेती– बाड़ी, बागवानी, चक्की चलाना आदि। इसमें सर्जन का कार्य होने के कारण शरीर के साथ–साथ मन की प्रसन्नता भी बढ़ती है।

२. **अनुत्पादक व्यायाम**–इसमें आसन, दण्ड–बैठक, दौड़, खेल–कूद, फुटबॉल, हॉकी, बैडमिंटन आदि का समावेश होता है। हमारे गरीब देश के लिये आर्थिक दृष्टि से उत्पादक व्यायाम ही अधिक अनुकूल हैं। व्यायाम के साथ–साथ काम हो जाय तो अच्छा है।

सनायविक तथा पेशीवर्धक व्यायाम– योगासन तथा प्राणायाम करने से शरीर की मांसपेशियों का व्यायाम कम, किंतु ज्ञान–तन्तुओं का व्यायाम अधिक होता है। योगासन करने से व्यक्ति शरीर से शक्तिशाली तथा मन से संयमी और धैर्यवान होते हैं। इसलिये इसको सात्विक व्यायाम भी कह सकते हैं। कठोर श्रम, जैसे लकड़ी चीरना, पेड़ों में कॉवड से पानी देना या कठिन व्यायाम जैसे–दण्ड–बैठक, वेटलिफ्टिंग, दौड़ना आदि मांस पेशियों की वृद्धि के लिये अधिक उपयुक्त है।

श्रेष्ठ व्यायाम–१. जो व्यायाम या श्रम धीमी गति से या सहज भाव से होता है, वह शरीर के लिये अधिक लाभदायक है। तैरना, नृत्य आदि व्यायाम ज्ञान–तन्तु तथा मांस–पेशियों की शक्ति बढ़ाने की दृष्टि से उत्तम व्यायाम है। इन दोनों में सभी अंग–प्रत्यंगों का व्यायाम हो जाता है।

२. रोगी तथा दुर्बल मन वाले व्यक्तियों के लिये खेलना उत्कृष्ट व्यायाम है। इसमें खेलने

के साथ–साथ मन भी प्रफुल्लित रहता है। व्यक्ति का मन खेल में लगा रहता है और उसके मन पर व्यायाम या श्रम का बोझ नहीं रहता। जिस काम या व्यायाम में व्यक्ति स्वयं को खो देता है, उससे शरीर तथा मन का उत्तम विकास होता है। इस दृष्टि से विभिन्न खेलों का अत्यन्त महत्व है।

पसीने तथा ईमानदारी की रोटी से शरीर और मन दोनों स्वस्थ रहते हैं। इसके विपरीत जिस रोटी में सच्चाई कम होगी, उसमें घी, दूध, मक्खन आदि पौष्टिक आहार होने पर भी वह व्यक्तियों के शरीर एवं मन दोनों को रोगग्रस्त किये बिना नहीं रहेगी।

श्रम या व्यायाम खुली हवा में, खेत या मिट्टी के सम्पर्क में प्रातःकाल करना चाहिये। अतिश्रम या अति व्यायाम से शरीर क्षीण होता है। व्यायाम का चुनाव प्रत्येक व्यक्ति को अपनी शक्ति के अनुसार सावधानी पूर्वक करना चाहिये। वृद्ध, अशक्त या रोगियों के लिये घूमना सर्वश्रेष्ठ व्यायाम है। यदि शरीर को रोग मुक्त रखना है तो प्रत्येक व्यक्ति को शरीर–श्रम या व्यायाम द्वारा दिन में एक बार पसीने से स्नान कर लेना चाहिये।

व्यायाम अत्यन्त सावधानी पूर्वक क्रमशः बढ़ाना चाहिये। इससे भूख लगेगी, पाचन सुधरेगा, आहार की मात्रा में वृद्धि होगी और स्वास्थ्य में पर्याप्त सुधार होगा। अतएव दैनिक जीवन क्रम में भोजन एवं श्रम या व्यायाम को समान महत्व देना चाहिये। जिस दिन व्यायाम करने का अवसर कम या बिल्कुल न मिले, उस दिन आहार की मात्रा घटा देनी चाहिये या हल्का (सुपाच्य) आहार लेना चाहिये। साधारणतया सौम्य व्यायाम ही मनुष्य को अपनाना चाहिये।

विश्राम का महत्व–अत्यधिक परिश्रम से थके हुए व्यक्ति में विश्राम के पश्चात् नवजीवन का संचार होता है। हम लोग प्रतिदिन शरीर तथा मन से दिनभर श्रम करते हैं, थककर चूर हो जाते हैं, किन्तु रात की गहरी नींद से शरीर में पुनः नयी शक्ति तथा मन में नयी उमंग उठने लगती है। विश्राम के बाद श्रम तथा श्रम के बाद विश्राम, दोनों एक–दूसरे के पूरक हैं। थके हुए व्यक्ति को पेट भर भोजन कराने से उसमें नयी शक्ति नहीं आयेगी। शक्ति विश्राम से आती है। जिस प्रकार बैटरी 'डिस्चार्ज' होने पर 'चार्ज' करके पुनः उपयोग में लायी जाती है, उसी प्रकार निद्रा या विश्राम की अवस्था में शरीर की 'क्षतिपूर्ति' होती है। श्रम करते समय शरीर के कोश टूटते या नष्ट होते हैं और नींद या विश्राम के समय नये कोशों का निर्माण होता है।

लोग शरीर को तो विश्राम देते हैं, किन्तु मन को विश्राम नहीं देते।। शरीर एक स्थान पर पड़ा रहता है, किन्तु मन इधर–उधर भटकता रहता है। नींद के समय शरीर शान्त रहता है, किन्तु मन स्वप्न में फँसा रहता है। शरीर तथा मन दोनों को विश्राम देने की कला सीखने पर ही पूरा विश्राम मिल सकता है। मन को विश्राम देने की कला ध्यान, नामस्मरण तथा माला आदि फेरने से प्राप्त की जा सकती है। नित्य के अभ्यास से यह सम्भव है। मन के अशान्त रहने पर शरीर का स्वस्थ रहना प्रायः अशक्य है। इसलिये हमारी आजीविका सत्य मार्ग से प्राप्त की हुई

होनी चाहिये। दिन भर के जीवन में संयम नियम का पालन करने से मन को शान्त रखने में सहायता मिलती है।

विश्राम की मात्रा—नवजात शिशु चौबीस घंटे में प्रायः बाईस घंटे सोता है। वह केवल माँ का दूध पीने के लिये जागता है। बिस्तर पर थोड़ा सा खेलने तथा रोने में उसका व्यायाम हो जाता है। ज्यों–ज्यों आयु बढ़ती है, त्यों–त्यों उसकी नींद कम होती जाती है। छोटे बालक ग्यारह–बारह घंटे, किशोर आठ–नौ घंटे, युवक आठ घंटे, प्रौढ़ छः–सात घंटे और वृद्ध चार–छः घंटे सोते हैं, सामान्य रूप से आयु बढ़ने के साथ–साथ विश्राम की मात्रा क्रमशः कम होने लगती है।

नवजात शिशु सब से अधिक इसलिये सोता है कि उसके शरीर में निर्माण–कार्य अत्यन्त तीव्र गति से चलता है, किन्तु कोशों का क्षय न्यूनतम मात्रा में होता है। जहाँ शरीर में कोश–निर्माण–कार्य की अधिकता होगी, वहाँ निद्रा की मात्रा में वृद्धि होगी। मनुष्य को युवावस्था अथवा तीस वर्ष की आयु तक आठ घंटे नींद की आवश्यकता होती है; क्योंकि युवक श्रम भी अधिक करता है और उसके शरीर में क्षति की अपेक्षा निर्माण–कार्य कुछ अधिक मात्रा में होता है। प्रौढ़–अवस्था में निर्माण और क्षय का संतुलन–सा बना रहता है, तथापि शारीरिक शक्ति का झुकाव घटने की ओर रहता है। आयु–वृद्धि के साथ–साथ शरीर में 'छीजन' अधिक होती है और उसके अनुपात में क्षति–पूर्ति की मात्रा कुछ कम रहती है।

जब आयु कम होती है, तब शरीर के सभी अवयव शक्तिशाली और नये होते हैं; क्योंकि उनमें विश्राम के द्वारा क्षतिपूर्ति की क्षमता अधिक रहती है। आयु–वृद्धि के साथ जब शरीर के अवयव पूर्णरूप से क्षति–पूर्ति नहीं कर पाते और घिसते चले जाते हैं, तभी वृद्धावस्था आती है तथा क्षति–पूर्ति की प्रक्रिया समाप्त होने पर मृत्यु का आगमन होता है।

निद्रा विश्राम का सर्वोत्तम साधन है। निद्रा कम लेने पर क्षति पूर्ति के अभाव में शरीर में थकान बनी रहती है। शारीरिक थकान का अर्थ है कि सभी अवयव थके हुए एवं सुस्त हैं, फलतः पाचन–तन्त्र के अवयव अपना कार्य, जिसमें मल–विसर्जन भी सम्मिलित है, पूरी तरह नहीं कर पाते। इसके परिणाम स्वरूप शरीर में मल का संचय प्रारम्भ होता है, जो सभी रोगों का मूल कारण है—**'सर्वेषामेव रोगाणां निदानं कुपिता मलाः।'**

इस प्रकार हम देखते हैं कि आहार तथा श्रम की तरह विश्राम भी शरीर के लिये समान रूप से महत्व रखता है। इन तीनों में किसी एक या अधिक की अवहेलना करने से शरीर में रोग की उत्पत्ति अनिवार्य है। निद्रा निःस्वप्न या कम स्वप्नयुक्त हो तो अधिक विश्रामदायिनी होती है।

भोजन के बाद सुस्ती या नींद क्यों ? भोजन करने के पश्चात् आमाशय में अन्न पहुँचता है। उसे पचाने के लिये आमाशय में अधिक रक्त–संचार की आवश्यकता होती है। इस प्रकार

पाचन में सहयोग देने के लिये शरीर के विभिन्न अंग हाथ–पैर, मस्तिष्क आदि का अतिरिक्त रक्त आमाशय में पहुँचता है, जिससे पाचन–कार्य को गति मिलती है और उसमें सुगमता होती है। इस तरह उदर के अतिरिक्त विभिन्न अंगों में रक्त संचार की कमी होने पर सम्बद्ध अंगों में शिथिलता आना स्वाभाविक है। इसलिये भोजन के पश्चात् पंद्रह–बीस मिनट तक विश्राम करने से पाचन– कार्य में सुविधा होती है। गरिष्ठ या अधिक भोजन कर लेने पर सबको ऐसा अनुभव होता है। और विश्राम के बाद पेट और शरीर दोनों हलके लगते हैं।

बच्चों या युवकों में भोजन के बाद आराम करने या लेटने की वृत्ति अधिक पायी जाती है। बच्चे या युवक तो शक्ति के भण्डार होते हैं, इसलिये भोजन के बाद खेलते–कूदते रहने पर भी उनकी अतिरिक्त जीवनीशक्ति पाचनकार्य को सरलता से पूरा कर लेती है। फिर भी थोड़ा विश्राम कर लेने पर पाचन–कार्य में सुविधा होती है। प्यारुक, वृद्ध व्यक्ति या रोगी की जीवनी शक्ति अल्प होती है, इसलिये भोजन के पश्चात् तत्काल उनकी जीवनी–शक्ति का अधिकांश भाग पाचन–कार्य में लगना स्वाभाविक है। अतएव भोजन के पश्चात् किंचित् विश्राम करना सदैव हितकर है।

जिन्हें भोजन करने के बाद तुरन्त कार्यालय में जाना पड़ता है, उन्हें दोपहर में अपने आहार की मात्रा अल्पतम रखनी चाहिये; जिससे जीवनी–शक्ति को पाचन–क्रिया पर विशेष ध्यान न देना पड़े। ऐसे व्यक्तियों को दोपहर में लघु आहार तथा सायंकाल या रात्रि में मुख्य आहार करना चाहिये। इसलिये विदेश के लोगों में दोपहर को हल्का और रात्रि को मुख्य आहार लेने की रीति है।

आज भी बड़े शहरों में जिन व्यक्तियों को प्रातः आठ बजे से रात तक लगातार काम रहता है, वे दिन में दूध, फल या अल्पाहार लेते हैं। ग्रीष्म ऋतु में विश्राम की विशेष आवश्यकता रहती है; क्योंकि गरमी के कारण थकान का शीघ्र और अधिक अनुभव होता है। वर्षा या शीत ऋतु में मामूली या अल्पतम विश्राम से काम चल जाता है; क्योंकि इन ऋतुओं में शरीर में स्फूर्ति पर्याप्त रहती है, विशेषकर शीत ऋतु में, तथापि अधिक आहार करके विश्राम करने के उपाय निकालना आलस्य का परिचायक है।

जिस प्रकार अधिक आहार या अधिक श्रम से शरीर को हानि पहुँचती है, उसी प्रकार अधिक विश्राम भी हानिप्रद है। इससे शरीर में आलस्य बढ़ता है और उससे शारीरिक तथा मानसिक कार्य–शक्ति घटती है।

आहार, श्रम तथा विश्राम–इन तीनों का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है और ये परस्पर एक–दूसरे को प्रभावित करते हैं। इसलिये आहार तथा श्रम के अनुकूल ही शरीर विश्राम की माँग करता है। इसी कारण एक मजदूर को, चूँकि उसकी माँसपेशियों के कोषों का अधिक क्षय होता है, इसलिये एक कार्यालय के बाबू से अधिक आहार तथा विश्राम की आवश्यकता रहती है।

सारांश, व्यक्तिगत आहार–विहार तथा आयु को ध्यान में रखकर ही विश्राम की व्यवस्था करनी चाहिये। जो धनिक लोग आहार अधिक और श्रम न कर आवश्यकता से अधिक विश्राम लेते हैं, उनके शरीर के अंग–प्रत्यंग की रचना में विकृति आ जाती है। मोटापा, तोंद निकलना या मधुमेह उसी का लक्षण है। आहार, श्रम तथा विश्राम में संतुलन रखने से शरीर सुडौल एवं गठीला बनता है।

अधिक विश्राम की तरह अल्प विश्राम भी अनेक प्रकार के रोग पैदा करता है। मन्दाग्नि, कब्ज तथा पाचन–सम्बन्धी रोग इसी के प्रारम्भिक परिणाम हैं। अतएव आहार, श्रम तथा विश्राम का संतुलन होना चाहिये। यही शरीर तथा मन को स्वस्थ रखने का सर्वोच्च उपाय है।

मन-शरीर का संचालन–शरीर सदा मन का अनुगामी होता है। मन में संकल्प उठता है, उस पर विवेक निर्णय देता है, फिर मन उस संकल्प का काल्पनिक चित्र खींचता है और इसके बाद ही शरीर द्वारा क्रिया प्रारम्भ होती है।

कल्पना करें, कोई चोर पहले किसी मकान से चोरी करने का संकल्प करता है। वह उस मकान के पास जाता है, देखता है, विचार करता है और मन के द्वारा ही बहुत सावधानी पूर्वक काल्पनिक शरीर को मकान के भीतर ले जाता है। उसका काल्पनिक शरीर शब्द न करते हुए अलमारी खोलता है और चुपचाप बड़ी चतुराई से गहने बाहर निकाल लाता है। इस प्रकार मन द्वारा काल्पनिक चोरी करने में सफलता का भास होने पर अन्त में वह मन और वास्तविक शरीर को लेकर चोरी करने में प्रवृत्त होता है। ठीक इसी तरह हम लोग प्रत्येक क्रिया प्रथमतः मन द्वारा काल्पनिक शरीर से करते हैं। किसी मित्र से मिलने की इच्छा होने पर मन शरीर से पहले ही पहुँचकर मिलन का रस लेने लगता है। मिठाई खाने की इच्छा होने पर पहले मन उसका रस लेता है, तब फिर शरीर उस क्रिया को पूर्ण करने के लिये प्रवृत्त होता है। सारांश, मानसिक क्रिया के बाद शारीरिक क्रिया होती है। अतएव हमारा मन कहाँ जाता है, क्या करता है, अच्छा या बुरा कैसा संकल्प करता है, यह बड़े महत्व की बात है। शुद्ध चित्त में पवित्र संकल्प या विचार और अशुद्ध चित्त में बुरे संकल्प या विचार उठते हैं।

इस प्रकार मन शरीर रूपी यन्त्र का संचालक है। मन या चित्त को शुद्ध रखने पर सही मार्ग पर चलेगा। इसलिये शरीर–शुद्धि की अपेक्षा चित्त–शुद्धि का महत्व अधिक है। चित्त–शुद्धि के बाद शारीरिक स्वास्थ्य का सुधार अत्यन्त स्वाभाविक ढंग से होगा।

रोग-मुक्त कैसे बनें–एनिमा, उपवास य रसाहार द्वारा केवल शरीर शुद्ध कर लिया और चित्त–शुद्धि पर ध्यान नहीं दिया तो शरीर कभी भी पुनः रोगी बन सकता है। चित्त–शुद्धि की ओर सतत ध्यान रहने पर शरीर–शुद्धि की प्रक्रिया स्वतः रहेगी; क्योंकि संयम–नियम सहज होता रहेगा तो फलतः स्वास्थ्य सुरक्षित रहेगा।

मन का शरीर पर प्रभाव–मन के स्वस्थ रहने पर शरीर सहज ही स्वस्थ रहेगा। इसके

विपरीत अस्वस्थ चित्त से शरीर में रोग उत्पन्न होना अत्यन्त स्वाभाविक है। कई बार बाह्य अनिश्चित परिस्थितियों के कारण शरीर रोगी बन जाता है, किन्तु यदि मन स्वस्थ रहे और उस पर रोग का असर बिल्कुल न होने दिया जाय, तो पूर्णतया सम्भव है कि शरीर अनुकूलता प्राप्त होने पर बड़ी सरलता से स्वास्थ्य लाभ कर सकता है।

मन के शान्त तथा प्रसन्न रहने पर सामान्यतः शरीर स्वस्थ रहेगा ही। मन में अशान्ति, क्रोध, ईर्ष्या, राग–द्वेष बढ़ने पर शरीर को रोगी बनने से रोका नहीं जा सकता। गहराई से विचार करने पर यह निश्चय पूर्वक ध्यान में आ जायेगा कि सभी रोगों का मूल कारण या बीज मन में ही रहता है। उदाहरणार्थ, किसी व्यक्ति के पेट में दर्द हो रहा है। स्थूल दृष्टि से हम पाते हैं कि पेट दर्द का कारण अधिक आहार है। सामान्यतः व्यक्ति रोटी शाक जैसा सादा आहार अधिक नहीं खाता, किन्तु यदि मिठाई या चटपटी वस्तुओं के आहार का प्रसंग आता है तो वह अधिक भोजन कर लेता है। ऐसा कैसे होता है ? यह लोभ–वृत्ति से होता है। इसलिये सूक्ष्म दृष्टि से पेट दर्द का मूल कारण लोभ–वृत्ति है। अधिक आहार और पेट–दर्द इस वृत्ति का परिणाम है। आजकल अनेक लोगों को क्रोध, भय या दुःख आदि के कारण रक्त चाप भी होता है।

प्राकृतिक चिकित्सा में हम एनिमा देकर आँतों की सफाई एवं रसाहार या उपवास के द्वारा शुद्धि करने का प्रयास करते हैं, किन्तु मन की शुद्धि के लिये कोई खास आयोजन नहीं कर पाते। मन की शुद्धि होनी चाहिये।

एनिमा से अधिक आहार के द्वारा पैदा हुई गंदगी दूर हो जायगी, रसाहार या उपवास से पूरी शरीर–शुद्धि हो जायगी, दूध और आम से सम्भवतः कायाकल्प भी हो जायगा; किन्तु जब तक मन में लोभ–वृत्ति रहेगी, तब तक अधिक आहार की प्रवृत्ति नष्ट नहीं होगी और शरीर पुनः रोगों का शिकार हो सकता है। अतएव शरीर शुद्धि के साथ–साथ चित्त भी शुद्ध होकर प्रसन्नता लाभ करे, यह अत्यन्त आवश्यक है।

मानसिक आहार–शरीर के लिये अन्नादि का आहार हम दिन में तीन–चार बार लेते हैं– एक या दो बार नाश्ता, दो बार भोजन; किन्तु व्यक्ति अपना मानसिक आहार चौबीस घंटे सतत रूप से (यहाँ तक कि स्वप्न भी) ग्रहण करता है। शरीर में आहार प्रवेश करने का एक ही मार्ग है–मुख; किन्तु हम अपना मानसिक आहार अनजाने में अपनी पाँच ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा निरन्तर लेते रहते हैं–देखना, सुनना, सूँघना, त्वचा द्वारा स्पर्श ज्ञान एवं जिह्वा द्वारा स्वाद का ज्ञान। जाग्रत अवस्था में मनुष्य निरन्तर देखता–सुनता है। हम लोग आँखों के द्वारा गंदे साहित्य पढ़ें, गंदे दृश्य या फिल्म देखें, कानों के द्वारा निन्दा बुराई तथा अश्लील गीत सुनें तो क्या हमारे चित्त में राग–द्वेष, ईर्ष्या–लोभ, क्रोध आदि के विकार नहीं बढ़ेंगे ? चित्त को शान्त तथा प्रसन्न रखने की दृष्टि से हमें अपनी पाँचों ज्ञानेन्द्रियों की शुद्धि करनी होगी। कान से अच्छी बातें सुनें,

भजन सुनें। आँख के द्वारा भी महापुरुषों की जीवनी पढ़ें, सत् दृश्य का अवलोकन करें। मन में अच्छे विचारों को स्थान दें तथा बुरे विचारों को त्यागें। तभी चित्त–शुद्धि की प्रक्रिया प्रारम्भ होगी।

'जैसा खाये अन्न वैसा होवे मन'—ऐसी कहावत है। इसमें पर्याप्त तथ्य है। हम जैसा अन्न खायेंगे, वैसा मन बनेगा। जीविका अर्जित करने या रोटी कमाने का साधन जितना शुद्ध होगा, पसीने की कमाई होगा, शोषण की नहीं, तब चित्त को स्वस्थ रखने में अत्यन्त सुगमता होगी। शरीर को केवल बाहर से कीमती फल, सेब, अंगूर, संतरा, दूध, मक्खन खिलाकर नियमित आहार तथा व्यायाम करके स्वस्थ रहने की चेष्टा करने पर भी उसमें रोग होना अत्यन्त स्वाभाविक होगा। अन्य वर्ग के धनिक लोगों में अधिक कष्टसाध्य या असाध्य रोग होने का मुख्य कारण मानसिक अस्वस्थता ही है। समाज में अधिक लोगों के पनपने का मुख्य कारण हमारी गिरी हुई मानसिक अवस्था है। मानसिक अस्वस्थता के कारण मानव– समाज अनेक प्रकार के रोगों तथा कष्टों से पीड़ित है।

अब प्रश्न यह उठता है कि अन्ततोगत्वा हम लोग आरोग्य की सुरक्षा या स्वास्थ्य को सुधारने के लिये काम में क्यों लगे हुए हैं ? रोगी स्वास्थ्य लाभ करने की इच्छा क्यों रखता है ? सच्चाई यह है कि मनुष्य नीरोग होकर पुनः भोगी बनने या अच्छी तरह खा पीकर मौज करने का लक्ष्य रखता है। मानव अनजान में इसी चक्र में घूम रहा है। भोग से रोग सुनिश्चित है। अतएव हमें अपने जीवन के प्रत्येक कार्य में योग (संतुलन) साधना है। आहार, श्रम, विश्राम तथा मन का संतुलन साधकर मानव योग तक पहुँच सकता है और वह योग है मानव का परम आत्मा से मिलन (योग)।

शरीर को स्वस्थ बनाकर योग में प्रवृत्त होना मानव जीवन का परम लक्ष्य है। आहार–विहार में संयम रखने से मन संतुलित, शान्त और प्रसन्न रहेगा। इस अवस्था में शरीर का स्वस्थ रहना अत्यन्त स्वाभाविक होगा।

यही प्राकृतिक जीवन तथा चिकित्सा की मौलिक दृष्टि है। मनुष्य संतुलन की दिशा में जितना अग्रसर होगा, उतना ही वह परम तत्व के निकट पहुँचेगा। मानसिक स्वस्थता ही आरोग्य की मुख्य कुंजी है। मन तथा शरीर दोनों शुद्ध और स्वस्थ रहने पर ही आरोग्य सुरक्षित रह सकता है।

मानसिक संतुलन बनाये रखने के लिये प्रार्थना, भजन, परम इष्ट का ध्यान, सद्ग्रन्थों का स्वाध्याय आदि महत्वपूर्ण साधन हैं। स्वस्थ रहने का अर्थ है, अपने आप में स्थित होकर शान्त एवं प्रसन्न रहना। वास्तव में शान्ति, प्रसन्नता या जीवन का सम्पूर्ण रस अपने आप में स्थित आत्म तत्व में विद्यमान है, जो उस परम तत्व का अंश है। 'स्व' अर्थात् आत्मा का परमात्मा के साथ सम्बन्ध स्थापित करना 'योग' है। यह योग प्राकृतिक जीवन का परम लक्ष्य है।

* * *

सुस्वागतम् नव संवत्सर

–द्वारिका प्रसाद शर्मा

प्रभो ! नियन्ताऽस्ति भवान् भवस्य, कालस्य सर्वस्य भवान् प्रभुर्भवान्।
विराजते कुत्र यशो न भवताम्, जले, स्थले वा वियति प्रभुः स्वयम्।।
यतो यतो याति मदीय दृष्टिः आभासते खलु भवान् विविधैः स्वरूपैः।
साधुष्वसाधुषु भवान् सकलेषु वस्तुषु, दरीदृश्यते मां भवतां स्वरूपम्।।
मन्देष्वमन्दमतिषु भवदीयरूपं, स्वीयांशतः किल भवान् परिभ्राजमानः।
भवच्चेतनादेव समस्त सृष्टिः, प्रकाशते चन्द्र दिवाकराविव।।
सर्वत्र सत्ता भवतां प्रभो ! किल, न राजते किं जड़-चेतनेषु।
तज्जातु नो व्यक्तरूपेण भासते, तथापि नूनमनुभूयतेतराम्।।
भवान् शान्तचित्तः शण्णाम एतत्, कथं तदा भूर्भवतीत्यशान्ता।
आतकिंनः पातकिनः पताकिनः, कथं विवृद्धिं नितरां भजन्ते।।
याच्या नः भगवन् कृपाऽस्तु भवतां दीनेषु सज्जनेषु,
जायन्तां नष्टं प्राया विघटन परा य आतकिंनो नृ पिशाचाः।
विश्वस्मिन्नखिलेऽपि शान्तयसतिः शान्ति प्रियाणां भवेत्,
सर्वे स्युः सुखिनो जनाः सुधनाः प्रेम्णा गरिम्णा युताः।।
स्वस्थं वपु : प्रमुदितं सकलं मनः स्यात्, धनागमं चैव निरन्तर स्यात्।
सत्संगतं च भगवज्जरणानुरागः, एतावतात् समधिकं किं कामयेऽहम्।।

हिन्दी भाषान्तर

प्रभो ! आप संसार के है नियन्ता, सभी काल के आप ही प्रभु रहे है।
कहाँ नहीं आप का यश विराजे, धरा में, सलिल मे गगन में बसे है।।
जहाँ–जहाँ भी नजर मेरी जाती, विभिन्न रूपधारी स्वय आप ही है।
सुजन हो या दुर्जन सकल वस्तुओं में, मुझे आप बस आप ही दीखते है।।
है आपका रूप मन्द धी और सुधी में, स्वीयाश धर आप ही है सुशोभित।
चैतन्य बन आप समस्त सृष्टि में, चन्द्रमा सूर्य सम हो रहे है प्रकाशित।।
प्रभो ! आपकी ही है सर्वत्र सत्ता, क्या चर–अचर मे नही राजती है।
क्वचित् व्यक्तरूपा नही वह रही है, तथापि अनुभूति में आ रही है।।
सुनते प्रभो ! आप तो शान्त मन है, फिर क्यो धरा आपकी यह अशान्ता।
यहीं क्यों है आतंक, अघ और दम्भ, बढ़ता हुआ दीखता है पनपता।
है याचना आपसे हे प्रभो यह, दीनों तथा सज्जनों पर कृपा हो,
विघटित हों औ नष्ट हों आततायी मनुज दनुज आप की यह कृपा हो।
हो कुछ ऐसी कृपा यदि बन सके, शान्त–एकान्त बस्ती,
जिसमें जन जन सुखी सधन हो प्रेम और शान्ति बसती।।
शरीर से स्वस्थ प्रसन्न मन सब, आता रहे धन सदयत्न पर भी।
सुसग के सह प्रभुपादरति भी, करूँ और मैं कामना क्या इतर की।।

श्री रामचरित मानस एवं योग

पूर्णचन्द्र पन्त शास्त्री

श्री रामचरित मानस एक भक्ति प्रधान धर्म ग्रन्थ है यह समस्त वेदों, उपनिषदों एवं पुराणों का सार है। यह बात इस ग्रन्थ में आरम्भ में ही स्पष्ट कर दी गई है। यथा :—

नानापुराणनिगमागम संमतं-
यदामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि।
स्वान्तः सुखाय तुलसीरघुनाथ-
गाथा भाषानिबन्धमतिमंजुलमातनोति।।

वस्तुतः रामायण एक उत्तम गीत–काव्य, उत्तम नीतिशास्त्र तथा श्रेष्ठ धर्म शास्त्र है। इसकी भाषा इतनी सरल, सरस तथा सुबोध है कि साधारण व पढ़े–लिखे लोग भी इसे पढ़ और समझ सकते हैं। इसका मुख्य विषय कर्म प्रधान भक्तियोग है। अतः इसमें आदि से लेकर अन्त तक कर्म, भक्ति एवं ज्ञान का सरल रीति से विवेचन किया गया है। रामायण कर्मयोग के इस सिद्धान्त का प्रतिपादक है कि मनुष्य अपने वर्णाश्रमोचित कर्तव्य कर्मों को निष्काम भाव से करता हुआ अन्त में मोक्ष का अधिकारी बनता है। जैसे–

धर्म ते विरति योग ते ज्ञाना।
ज्ञान मोक्षप्रद वेद बखाना।।

अर्थात्–कर्तव्य–पालन रूप धर्म का आचरण करने से मनुष्य वैराग्यवान बन जाता है। कर्मफल में उसकी स्पृहा नहीं रहती और वह निष्काम कर्मयोगी बनकर योगसिद्धि को प्राप्त होता है। योग से ज्ञान की प्राप्ति होती है तथा ज्ञान ही मोक्ष का साधन है।

श्री रामायण कर्मयोग का एक आदर्श ग्रन्थ है। इसकी विशेषता यह है कि यह सिद्धान्त ग्रन्थ होने के साथ–साथ स्वयं ही दृष्टान्त ग्रन्थ भी है। अर्थात् इसमें जहाँ एक ओर योग सिद्धान्तों को समझाया गया है वहीं दूसरी ओर सिद्धयोग के योग–ऐश्वर्य को अद्भुत रूप से प्रदर्शित किया गया है।

मनुष्य जन्म की दुर्लभता

श्री रामचरित–मानस में यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि मनुष्य शरीर अत्यन्त दुर्लभ है। देवता भी उसके लिए तरसते हैं। अनादि काल से विविध योनियों में भटकता हुआ जीव प्रभु की अहैतुकी दया से मनुष्य शरीर धारण करता है। अतः मानव का कर्तव्य है कि वह सद्गुरू की शरण में जाकर पूरे उत्साह के साथ योग साधना करता हुआ अपना जीवन सार्थक बना ले। जो अभागा मनुष्य इस अमूल्य जीवन को व्यर्थ में ही गवा देता है उसे बाद में पछताना पड़ता है। यह बात निम्नलिखित चौपाइयों में समझाई गई है–

बड़े भाग मानुष तन पावा।
सुरदुर्लभ सब ग्रन्थन्हि गावा।।
साधन धाम मोक्ष कर द्वारा।
पाइ न जेहि मोक्ष कर द्वारा।
पाइ न जेहि परलोक संवारा।।
सो परम दुःख पावई।
सिर धुनि धुनि पछिताहि।।
कालहिं कर्महिं ईश्वरहिं मिथ्या दोष लगाया।।

मनुष्य शरीर इस भव सागर को पार करने के लिए एक सुदृढ़ नौका के समान है,

अनुकूल वायु ही ईश्वर की कृपा है और सद्गुरू इस मनुष्य शरीर रूपी नौका को चलाने वाले कुशल मल्लाह हैं। ये तीनों ही अत्यन्त दुर्लभ साधन जिसे प्राप्त हो जायें और फिर भी वह आत्मोद्धार के लिए प्रयत्न न करे तो निस्सन्देह वह मन्द बुद्धि निन्दा का पात्र है और आत्मघाती की भाँति अधोगति को प्राप्त होता है। जैसे—

नरतनु भव वारिधि कहँ बेरे।
सन्मुख मरूत अनुग्रह मेरे।
कर्णधार सद्गुरु दृढ़ नावा।
दुर्लभ साज सुलभ करि पावा।।

जो न तरै भव सागर, नर समाज अस पाइ।
सो कृतनिन्दक मन्दगति, आत्महा गति जाइ।।

मानसकार गोस्वामी जी ने जीव, माया एवं ईश्वर का रहस्यमय स्वरूप जन साधारण के हितार्थ बहुत सरल भाषा में थोड़े से शब्दों में प्रकट किया है।

ईश्वर अंश जीव अविनाशी।
सहज अमल चेतन सुखराशी।
सो मायावश भयऊँ गोसाँई।
बन्ध्यो कीट मरकट की नाई।।

ईश्वर का अंश होने के कारण जीव अविनाशी है, चेतन है, निर्मल है तथा सहज ही सुख की खान है, किन्तु माया के वशीभूत होने के कारण वह तोते तथा बन्दर की भाँति बन्धन में पड़ा हुआ है।

जीव और ईश्वर के बीच में दीवाल है वही माया है। गोस्वामी जी ने इसी बात को सरस साहित्यिक भाषा में, सीता जी के उदाहरण द्वारा इस प्रकार समझाया है—

आगे राम तपन पुनि पाछे।
तापस वेष विराजत काछे।
उभय मध्य सिय सोहति कैसी।
ब्रह्म जीव बिच माया जैसी।

तथा—

मैं अरु मोर तोर मैं माया।
जेहि वश कीन्हे जीव निकाया।।
गो गोचर अहँ लगि मन जाई।
सो सब माया जानेहुँ भाई।।

मैं और मेरा, तू और तेरा यही माया है, जिसने समस्त जीवों को वश में कर रखा है। इन्द्रिय और इन्द्रियों से परे जहाँ तक मन जाता है। उसे माया समझना चाहिए।

माया ईश न आपुकहँ, जानि सकै सो जीव।
बँध मोक्षप्रद सर्वपर, माया प्रेरक सीव।।

जो माया के वश में है तथा अपने को माया का प्रेरक जानता है वह जीव है तथा जो बन्धन और मोक्ष का दाता है एवं सबके ऊपर माया का प्रेरक है वही ईश्वर है।

मायावश्य जीव अभिमानी।
ईशवश्य माया गुणखानी।।
परवश जीव स्ववश भगवन्ता।
जीव अनेक एक श्रीकन्ता।।

अभिमानी जीव माया के वश में रहता है। और सत्व, रज एवं तम रूपा त्रिगुणात्मिका माया ईश्वर के वश में रहती है। इस प्रकार जीव पराधीन है, किन्तु ईश्वर स्वतन्त्र है। जीव अनेक हैं लेकिन ईश्वर एक है।

सगुण और निर्गुण ब्रह्म में अभेद

सगुनहिं अगुनहिं नहिं कछु भेदा।
गावहिं मुनि पुरान बुध वेदा।।

अगुन अरूप अलख अज जोई।
भक्त प्रेमवश सगुन सो होई।।

सगुण और निर्गुण ब्रह्म में कोई भेद नहीं है, ऐसा वेद, पुराण, ऋषि–मुनि तथा ज्ञानीजन बतलाते है। वस्तुतः निर्गुण, निराकार नित्य एवं अजन्मा परमेश्वर भक्त के प्रेम के वशीभूत हुए उसकी भावना के अनुसार साकार प्रकट हो जाया करते है।

श्री रामचरित–मानस में योग का स्वरूप तथा उसकी साधना पद्धति बड़ी सरल भाषा में वर्णित की गई है। नवधा भक्ति के अन्तर्गत योग के विविध साधनों का गागर में सागर की तरह समावेश कर दिया गया। तप, स्वाध्याय एवं ईश्वर प्रणिधान रूप क्रियायोग का निरूपण स्थान–स्थान पर इस सरस रूप में किया गया है कि जन साधारण उस पर आचरण करता हुआ योगारूढ हो सकता है। श्री गोस्वामी जी ने भक्ति (ईश्वर प्रणिधान) को समस्त सुखों की खान, योग का मूल और मोक्ष का दरवाजा बताया है तथा महामुनि काक भुशुण्डि, गृद्धराज जटायु, ज्ञानी सुतीक्ष्ण एवं परम भक्त हनुमान आदि का उदाहरण देते हुए इस बात को सिद्ध किया है।

ईश्वर प्रणिधान से ही मनुष्य ईश्वरानुग्रह का भाजन बनता है। भगवान सदा उसके वश में रहते हैं और उसे समस्त योग–सिद्धियों से विभूषित कर देते हैं। भक्त हनुमानजी की दिव्य योग लीलायें इस बात को सिद्ध करती हैं।

भक्ति योग की दृढ़ आधारशिला। जिस प्रकार बिना नींव का मकान स्थाई नहीं होता। पहले तो वह बनते–बनते गिर जाता है और बन भी जाये तो अधिक समय तक टिक नहीं सकता। ठीक इसी प्रकार बिना भक्ति के पहले तो योगमार्ग में प्रवृत्ति ही नहीं होती और यदि मनुष्य प्रवृत्त हो भी जाये तो श्रद्धा के अभाव के कारण वह कुछ समय बाद ही लक्ष्य भ्रष्ट हो जाता है।

इसी प्रकार स्वाध्याय भी योगसिद्धि का एक सरल तथा श्रेष्ठ साधन है। इसी बात को समझाने के उद्देश्य से सन्त शिरोमणि तुलसीदास जी ने रामायण के बालकाण्ड में एक पृथक "नाम रामायण" की रचना कर डाली। जिसकी कुछ चौपाइयाँ निम्नलिखित है–

नाम जीह जपि जागहिं जोगी।
बिरति बिरंचि प्रपंच बियोगी।।
ब्रह्मसुखहि अनुभवहिं अनूपा।
अकथ अनामय नाम न रूपा।।
जाना चहहि गूढ गति जेऊ।
नाम जीह जपि जानहिं तेऊ।।
साधक नाम जपहि लय लाये।
होंहि सिद्ध अणिमादिक पाये।।
जपहिं नाम जन आरत भारी।
मिटहिं कुसंकट होहिं सुखारी।।

योगीजन जिह्वा से निरन्तर प्रभु का नाम जपकर और वैराग्यपूर्वक संसार को त्याग कर मोहरूपी रात्रि में जागते हैं, जिससे वे उस ब्रह्मानन्द सुख का अनुभव करते हैं जो कि उपमा रहित, अकथनीय एवं सब प्रकार के दुःखों से रहित है तथा जिसका नाम और रूप नहीं है।

जो मनुष्य गूढ़ रहस्यों को जानना चाहते हैं वे जिह्वा से मन्त्र जाप करते हुए उन बातों को जान सकते हैं जो साधक मन लगाकर मन्त्रजाप करते हैं। वे अणिमादि सकल योग सिद्धियों को पाकर सिद्ध हो जाते हैं। महादुःखी मनुष्य भी ईश्वर के नाम का जप करते हुए कष्टों से मुक्त हो जाते हैं और हर प्रकार से सुखी हो जाते हैं।

श्री रामचरित मानस में सत्संग को ही कल्याण का हेतु बताते हुए यह सिद्ध किया गया है कि बिना सत्संग से मनुष्य योग को प्राप्त नहीं हो सकता। निम्नलिखित चौपाइयों में सत्संग की महिमा का मुक्तकण्ठ से मान किया है—

मुद मंगलमय सन्त समाजू।
जौ जग जंगम तीरथ राजू।।
रामभक्ति जहँ सुरसरि धारा।
सरस्वति ब्रह्मविचार प्रचारा।।

सन्तों का समाज आनन्द और मंगल का दाता है और वह एक चलता–फिरता तीर्थराज (प्रयाग) है। परम प्रभु राम की भक्ति ही मानो गंगा की धारा है और उस परमेश्वर के विचार का प्रचार ही माना सरस्वती है।

मज्जनफल देखिये तत्काला।
काक होहि पिक बकहि मराला।।
बाल्मीकि नारद घटयोनी।
निज-निज मुखनि कही निजहानी।
जलधर थलधर नभचर नाना।
जे जड़ चेतन जीव जहाना।
मति कीरति गति भूति भलाई।
जब जेहि जतन जहाँ जेहि पाई।।
सो जाने सत्संग प्रभाऊ।
लोकहुं वेद न आन उपाऊ।।
बिनु सत्संग बिवेक न होई।
रामकृपा बिनु सुलभ न सोई।।

इस सत्संग रूपी तीर्थराज में स्नान करने का फल तत्काल मिल जाता है कि कौआ कोयल बन जाती है और बगुला हंस बन जाता है। इस बात को सुनकर किसी को आश्चर्य नहीं करना चाहिए। क्योंकि सत्संग की महिमा अपार है, वह किसी से छुपी नहीं है।

बाल्मीकि, नारद और अगस्त्य जी ने अपने–अपने मुख से अपनी आप बीती कही है, जल में चलने वाले, पृथ्वी पर बिचरने वाले और आकाश में उड़ने वाले अनेक प्रकार के जो जड़ और चेतन जीव संसार में हैं उन्होंने बुद्धि, इज्जत, गति, ऐश्वर्य और भलाई जब जिस प्रकार और जहाँ पाई है वे ही सत्संग का प्रभाव जानते हैं। क्योंकि लोक और वेद में उसका अन्य कोई उपाय नहीं है। बिना सत्संग के ज्ञान नहीं होता और परमेश्वर की कृपा के बिना सत्संग भी नहीं मिल सकता।

श्री रामचरितमानस में गुरु–भक्ति को ज्ञान का मूल और मोक्ष का दरवाजा कहा गया है। बिना गुरु–भक्ति के मनुष्य योगी नहीं बन सकता और भव–सागर को पार नहीं कर सकता। जैसे—

बिनु गुरु भव निधि तरइ न कोई।
जो विरंचि शंकर समय होई।।
श्री गुरु पद नख मणि गण ज्योती।
सुमिरत दिव्य दृष्टि हिय होती।।

दलन मोहतम सोसप्रकासू।
बड़े भाग उर आवहि जासू।।

निम्नलिखित चौपाई में संसार चक्र से छूटने का उपाय समाधि तथा उसका स्वरूप वर्णित किया गया है।

सोहमस्मि इति वृत्ति अखण्डा।
दीपशिखा सोई परम प्रचण्डा।।
आतम अनुभव सुख सुप्रकाश।
तब भव मूल भेद भ्रम नाश।।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि यमनियमों का तत्परता से पालन करना, गुरुभक्ति, सन्तों की सेवा, स्वाध्याय, ध्यानाभ्यास कर्तव्यकर्मों को निष्काम भाव से सम्पन्न करना, प्राणिमात्र में दया तथा सर्वत्र भगवद्दर्शन का अभ्यास करना यही योग-साधना का वास्तविक स्वरूप है, जिसका श्री रामचरितमानस में विशद रूप से वर्णन किया गया है।

सियाराममय सब जग जानी।
करहुँ प्रणाम जोरि जुग पानी।।

इसी आदर्श को लेकर रामचरितमानस की रचना हुई है।

जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि राम चरितमानस एक उत्तम योगपरम ग्रन्थ है। इसमें योग सिद्धान्तों का प्रतिपादन करने के साथ-साथ दृष्टान्त रूप में योग सिद्धियों का चित्रण भी किया गया है। निम्नलिखित घटनाओं में योग सिद्धियों की स्पष्ट झलक मिलती है।

जनकपुरी में जगज्जननी सीता द्वारा ऋद्धि-सिद्धियों को आदेश देकर चमत्कार पूर्ण रीति से बारात का आतिथ्य कराना, महर्षि भारद्वाज द्वारा राजा भरत तथा उनकी अपार सेना के आतिथ्य के लिए वीरान जंगल में उत्तमोत्तम महल, दास-दासियाँ तथा अनेकानेक अनुपम सुविधापूर्ण व्यवस्थाओं की संरचना करना उनके अपार योग ऐश्वर्य को प्रदर्शित करता है। श्री हनुमान जी की प्रत्येक लीला योगसिद्धियों पर आधारित है।

समुद्र पार करते समय तथा सजीवनी बूटी के लिए जाते समय उन्होंने लघिमा तथा आकाशगमन सिद्धियों का प्रयोग किया। बीच समुद्र में पहुँच कर लंकिनी नाम की राक्षसी का सामना करने के लिए महिमा तथा अणिमा सिद्धियों का प्रयोग किया। अहिरावण का यज्ञ ध्वंस करने तथा उसके बन्धन से श्रीराम लक्ष्मण को मुक्त कराने के लिए पुनः अणिमा, लघिमा, महिमा एवं गरिमा इन सभी योग सिद्धियों का सहारा लिया।

रावण के दरबार में बड़े-बड़े योद्धाओं द्वारा यहाँ तक कि स्वयं महाबली रावण द्वारा भी अंगद के पाँव का न हिलना गरिमा सिद्धि का प्रतीक था। इसके अतिरिक्त और भी अनेकों घटनायें हैं जिनमें योगसिद्धियों का पूर्ण परिचय मिलता है।

अतः कहा जा सकता है कि श्री रामचरित मानस एक उत्तम योगपरम ग्रन्थ है। इसमें साधन योग, सिद्धयोग एवं यौगिक ऐश्वर्य को सुन्दर रूपेण दर्शाया गया है। इसका अध्ययन-मनन और निदिध्यासन करने वाले व्यक्ति का अल्पकाल में ही योगारूढ होकर कल्याण हो सकता है।

* * *

महाप्रभु श्री रामलाल योग शिविर गंगापुर सिटी

प्रेषक : हरीमोहन पैगोरिया (अध्यक्ष)

आनन्दकन्द महाप्रभु श्री रामलाल जी की करुणा–कृपा से श्री सिद्धयोग साधक मण्डल द्वारा गंगापुर सिटी (राज०) के नृसिंह मन्दिर के प्रांगण में "महाप्रभु श्री रामलाल चन्द्रमोहन योग साधना शिविर का आयोजन किया गया। यह योग शिविर हर वर्ष की भाँति दिनांक २८.१२.२००३ से १.१.२००४ तक आयोजित हुआ। यह यौगिक कार्यक्रम हमारे सद्गुरुदेव परम श्रद्धेय योगाचार्य डा० दासलाल जी के सान्निध्य में सम्पन्न हुआ। सौभाग्य से गुरुदेव आचार्य दासलाल जी का जन्मदिन एक जनवरी पड़ता है, जिसे हम सभी गुरुभाई अति उत्साह एवं उल्लास से मनाते हैं। प्रतिवर्ष इस अवसर पर हजारों व्यक्ति दीक्षित होकर योग मार्ग की ओर अग्रसर हो रहे हैं। महाप्रभु जी एवं गुरुदेव श्री चन्द्रमोहन जी की कृपा से योग का प्रचार–प्रसार आशातीत गति से हो रहा है। फलस्वरूप इस कलिकाल में अल्पायु मानव को भवसागर पार करने हेतु योग रूपी एक नौका मिल रही है।

यह पंचदिवसीय कार्यक्रम प्रति ५ बजे से रात्रि १० बजे तक अनवरत रूप से चलता रहा। प्रातः ५ बजे से ६ बजे तक ध्यानाभ्यास किया जाता, ६ बजे से ७.३० तक जीवन तत्व साधन व आसन, ८ से सुबह १० बजे तक आरती, गीता पाठ, एवं गीता सार प्रवचन किया जाता था। सम्पूर्ण कार्यक्रम की नियमावली ठीक उसी प्रकार से रहती जिस प्रकार योग योगेश्वर अनन्तश्री चन्द्रमोहन जी महाराज के समय हुआ करती थी।

आनन्दकन्द श्री प्रभुजी की कृपा से आयोजित यह कार्यक्रम सभी साधकों में आत्मशक्ति व योग उन्नति प्रदान करती है। इस पावन पर्व पर परम श्रद्धेय आचार्य दासलाल जी महाराज द्वारा गीता, योग व अष्टांग योग पर प्रवचन किये गये। इसके अलावा सम्प्रज्ञात समाधि, असम्प्रज्ञात समाधि, कुण्डलिनी जागरण व ध्यान करने की विधि के बारे में प्रवचन किये गये। बताया जाता है कि जीवन में योग ही आध्यात्मिक उन्नति एवं आत्म साक्षात्कार का परम साधन है। लोक–परलोक में योग का काफी महत्व है। ध्यान योग के द्वारा व्यक्ति के सारे संकटों का निवारण हो जाता है। समाधि का अभ्यास करते–करते वह ऋतम्भरा बुद्धि से युक्त हो जाता है। इस प्रकार सद्गुरुदेव की कृपा से धीरे–धीरे उनके बताये मार्ग पर चलने से व्यक्ति उत्तरोत्तर प्रगति करता चला जाता है। अपने प्रवचन में श्री गुरुदेव द्वारा यही बात बार–बार जोर देकर कही गई कि नियम से गुरुमंत्र का प्रातः ५ से ७ बजे तक जाप करो, फिर एक घण्टा ध्यानाभ्यास करो। इसी से हम सच्चे अर्थों में गुरुदेव की आज्ञा का पालन कर सकते हैं। आइये हम संकल्प करें कि गुरुदेव की आज्ञाओं का पालन करते हुए उनके संकल्पों को पूरा करें। हम स्वयं इस योग के अमर सन्देश को जन–जन तक पहुँचायें तथा योगारूढ होने के लिये अपनी साधना को और प्रबल बनायें तो प्रभुजी की कृपायें अवश्य–अवश्य होंगी।

पंच दिवसीय योग साधना शिविर में बड़ी संख्या में गुरुभाई–बहिन अन्य प्रान्तों से भी पधारे। दिल्ली, दतिया (म०प्र०) हरियाणा, मण्डी (हि०प्र०) आगरा तथा राजस्थान के विभिन्न जिलों से आये साधकों ने इस कार्यक्रम को सफल बनाया। ❋ ❋ ❋

पादहस्तासन

(गतांक से आगे)

विधि—सम्भाव से सीधे खड़े हो जायें व अपने दोनों हाथों को पीठ की ओर से घुमाकर आगे की ओर नीचे को झुकाते लायें व धीरे-धीरे अपने दोनों हाथों से दोनों पैरों के अंगूठे पकड़ लीजिये। किन्तु पैर यत्किंचित भी झुकने न पायें। पीठ झुकाकर गोलाकार बन गई हो व सिर दोनों हाथों के बीच आ गया हो। इसी को पादहस्तासन कहते हैं। निरन्तर के अभ्यासी लोग इसे खड़े होकर करते हैं।

दूसरा रूपक खड़ा पश्चिमोत्तान—अभ्यासी लोग इसी को खड़े होकर किये जाने वाले पश्चिमोत्तान का ही रूपक बना लेते हैं। अभ्यासियों के लिये सभी कुछ सम्भव है। इस आसन को बढ़ा लेने पर दोनों हाथों से पैरों के अंगूठे पकड़े रहने पर भी सिर दोनों जानुओं का स्पर्श करता है। किन्तु पैरों के तनाव में कोई भी कमी नहीं आती। इस प्रकार स्थिति खड़े होकर किया जाने वाला पश्चिमोत्तान की आ जाती है। इससे भी अधिक अभ्यासी अपने सिर को दोनों घुटनों के बीच में ले जाते हैं। व दोनों हाथों को पैरों के बिल्कुल बराबर लाकर हथेलियाँ जमीन में जमा देते हैं।

तीसरा रूपक उष्ट्रासन खड़ा—इसी पादहस्तासन का निरन्तर अभ्यास करने वाले इसको खड़े हुए ऊँट के रूपक से भी करते हैं। दोनों पैरों को थोड़ा खोलकर रखें, दोनों हाथों को बिल्कुल सीधे पैरों में ९ या १" बालिस्त की दूरी पर हथेलियाँ जमाकर रखें, गर्दन को थोड़ा ऊँचा कर सामने देखें। यही खड़े हुए ऊँट का रूपक है। कुछ भी हो इन सभी विधियों से किया जाने वाला यह पादहस्तासन बहुत ही गुणकारी है।

करने का समय—अपने शरीर के बलाबल को देखकर प्रथम अभ्यास आधे मिनट से ही अभ्यास करें व शनैः शनैः आधा-आधा व अभ्यास बढ़ने पर प्रतिदिन एक-एक मिनट भी बढ़ाया जा सकता है। साधारण रूप से जहाँ आसनों की क्लासें लगती हैं, वहाँ यह आसन शिक्षक के बताये कायदे से एक मिनट या आधा मिनट ही अभ्यसनीय है। अन्य स्थिति में इसी का विशेष अभ्यास बढ़ता जा रहा हो तो अपने शरीर के बलाबल को देखकर प्रत्येक रूपक से दो या तीन मिनट करने पर यह अपना परिणाम दिखलायेगा।

लाभ—यह आसन बहुत ही लाभप्रद है। इसके करने से पैरों के पीठ के नाड़ी समूह में तनाव पड़ता है। अतः उन सभी नाड़ियों को पूरा-पूरा बल देता है। यकृत एवं प्लीहा (जिगर व तिल्ली) की बीमारियों को पूर्णतः लाभ पहुँचाता है। आँतें अपना-अपना काम ठीक-ठीक करने लगती हैं। पेट में बनने वाली वायु को रोकता है। जठराग्नि बढ़ती है। क्षुधा खूब बढ़ती है।

स्थूलता दूर होकर पेट में कृशता आती है। चर्बी को रोकता है। पेट की सभी बीमारियों में परम हितप्रद है।

महावीरासन

विधि—सभी योगासनों में महावीरासन भी परम उल्लेखनीय है. यह आसन नवयुवकों के लिये बहुत ही लाभप्रद है। इस आसन के करने की विधि इस प्रकार है। सरल भाव से बिल्कुल सीधे खड़े होकर अपने एक पैर को (बांये या दाहिने किसी एक को) आगे की ओर बढ़ाकर पंजे पर बल देकर घुटने जितना अधिक से अधिक झुका सकें झुका दें, एड़ी ऊपर की ओर उठी हुई हो, इस आगे की ओर बढ़ाने वाले पैर का यह रूपक बनाकर पिछले पैर को पिछली तरफ फैलाओ उसकी भी एड़ी उठी हुई हो व पैर का पंजा ही नीचे जमीन पर लगा हो, पैर बिल्कुल सीधा एवं अधिक से अधिक फैला हुआ हो, उसके बाद जो पैर आगे को बढ़ाया हो उसी ओर का हाथ पैर की ही तरह आगे को बढ़ाकर कोहनी की जगह से हाथ को इस प्रकार मोड दें और ऊपर की ओर हाथ के पंजों को फैलाओ जैसे कोई वजन हाथ पर उठाया हुआ हो, इसी प्रकार उसके विपरीत हाथ को पिछली ओर इसी प्रकार मोड़ दें, जैसे उस पर कोई वजन उठाया हो, देखने वालों को यह मालूम पड़े कि जिस प्रकार श्री हनुमान जी श्री लक्ष्मण जी को शक्ति लगने पर पहाड़ उठाकर लाये थे वे वेग से आ रहे थे, की तरह आकृति दिखाई दे। छाती आगे की ओर तनाव के साथ निकली हुई हो, गर्दन ऊँची हो व दृष्टि सामने ऊपर की ओर हो, इसी का नाम महावीरासन है।

करने का समय—यह आसन १ मिनट से प्रारम्भ करके दायें व बायें पैर की तरफ दोनों ओर से करते हुए १० मिनट तक किया जा सकता है। किन्तु शनैः शनैः ही बढ़ाना उपयोगी रहेगा।

फल—इस आसन को करते हुए शरीर को थोड़ी-थोड़ी लचक जैसे देते रहना चाहिये व मन में पूर्णतया वीर भाव रखने चाहिये, अपने शरीर में ही हनुमानजी के ओज, तेज एवं बल की धारणा करते हुए साधक को सोचना चाहिये कि मैं पूर्ण बलवान हूँ, ओज तेज से परिपूरित हूँ, पूर्ण ब्रह्मचारी हूँ। इस प्रकार की धारणा करने वाले साधक के कार्य विकार नष्ट हो जाते है। विशेषतः तमोगुण व रजोगुण की प्रधानता से आने वाले दुःस्वप्न बिल्कुल नहीं आते। इसी कारण इस आसन के अभ्यासियों को स्वप्न दोष बिल्कुल नहीं होता है। ओज एवं तेज बढ़ता है। शरीर में दृढ़ता बढ़ती है।

नोट—स्वप्न दोष के रोगी पुरुषों को चाहिये कि वे सोते समय ही हनुमान जी का स्मरण करके या हनुमान चालीसा का पाठ करके सोया करें। श्री हनुमान जी का स्मरण करके सोने से दुःस्वप्न नहीं आते हैं। स्वप्न दोष की भयंकर बीमारी से छुटकारा मिल जाता है।

* * *